भूमिका ।



प्रतिक्रमण पाठके रचयिता कौनसे महानुभाव हैं ? इसके निश्चयका हमारे पास कुछ साधन नहीं है, तौ भी श्रुतसागराचार्यने कई जगह गौतम महर्षिका उल्लेख किया है। सहस्रनामकी टीकामें प्रतिक्रमणके पाठका विवरण 'उक्तं च महर्षि गौतमस्वामिना' इत्यादि प्रकारसे स्पष्ट किया है। ये गौतम महर्षि कौनसे ? और इस वसुंधराको किस समय पवित्र किया इस विषयका इतिहासज्ञ प्रकाश करेंगे।

प्रतिक्रमणकी हस्त लिखित (संवत् १६०५ की लिखी) प्रति ईडरके प्रसिद्ध भंडारमें है। और भी ईडरके भंडारमें अनेक प्रतिक्रमणकी प्रति मिलती हैं। मुनियोंके प्रतिक्रमण पाठकी भिन्न२ प्रति है परन्तु सब प्रतियोंमें कर्ताका नाम देखनेमें नहीं आया। अतएव इस प्रतिक्रमण पाठके कर्त्ताका निश्चय विचाराधीन है।

प्रतिक्रमण पाठसे यह प्रतीत होता है कि यह संग्रह किया हो, क्योंकि इसमें भगवान वसुनंदी सिद्धान्त चक्रवर्तीके रचित श्रावकाचारकी गाथा मिलती है, परंतु यह बात नही है। क्योंकि प्राचीन प्रतियोंमें यह पाठ नहीं है। किसी विद्वानने व्रत और प्रतिमाओंका स्वरूप समझानेके लिये यह पाठ निवेसित किया हो। अस्तु जो कुछ हो। प्राचीन प्रतियोंसे यह किसी खास महर्षिका बनाया हुआ प्रतीत होता है। संभव है कि गौतम महर्षिका ही बनाया हो।

प्रतिक्रमण पाठ प्रथम भावनगरसे प्रसिद्ध हुआ, फिर सेठ हीराचंद नेमचंद शोलापुरवालोंने मराठीमें प्रसिद्ध किया व गुर्जर भाषामें प्रसिद्ध हो चुका है इस प्रकार इसका प्रचार सर्वत्र देखनेमें आता है परंतु संयुक्त प्रांत और मध्य प्रांतमें इसका प्रचार नहीं है इस लिये हिंदी भाषामें प्रसिद्ध किया जाता है आशा है समस्त बन्धुगण इससे लाभ लेंगे। यदि इससे कुछ लाभ हुआ तो सामायिक पाठ भी जो गौतम महर्षिकृत संग्रहीत है प्रकाशित किया जायगा।

इसमे मेरी अज्ञतासे जो कुछ आगमविरुद्धता हुई हो विद्वज्जन क्षमाकर एक पत्रसे सूचित करें जो द्वितीय संस्करणमें सुधार दी जाय।

भवदीय–

नंदनलाल जैन वैद्य, ईडर।



प्रस्तावना।



पाठकगण ! यह **प्रतिक्रमण** आपके करकमलोंमें उपस्थित है। प्रतिक्रमण किसको कहते हैं ? और वह क्यों करना चाहिये यह वतला देनेसे इस पुस्तककी उपयोगता अधिक बढ जायगी।

प्रतिक्रमणका "अपने भले बुरे किये हुए (कृतकर्म) कर्मोंका आत्मनिंदा पूर्वक त्याग करनेका भाव—आत्माका ऐसा विशुद्ध परिणाम कि जिसमें अशुभ क्रियाओं निवृत्ति हो" यह वाच्यार्थ है। इस प्रकारके भाव भेद विज्ञानको उत्पन्न करते हैं।

प्रतिक्रमण षट् आवश्यकोंके अंतर्गत एक भेद है। षट् आवश्यकोंका पालन करना गृहस्थ और मुनियोंके लिये नितान्त आवश्यक है। इतना ही नहीं, किन्तु प्रतिक्रमण करनेसे आत्मोन्नतिके साथ २ भावोंकी विशुद्धि और कर्मोंकी निर्जरा सातिशय होती है।

जीवमात्र सुख और शांतिका मार्ग अन्वेषण करते हैं। सुख और शातिका प्रधान मार्ग वीतरागता—कषायोंकी निवृत्ति है। कषायोंकी विजय पापाचरणोंसे भय, विषयोंसे निवृत्ति, ममत्वत्याग, स्वात्मबोध और स्वात्मगुण चिन्तवन करनेसे होती है। प्रतिक्रमण करनेसे उक्त पाचों कार्य स्वयमेव सिद्ध होते हैं। **प्रतिक्रमण आत्मसाधनका और निर्वाणपदका मुख्य अंग माना गया है।**

अनादि कालसे यह जीव हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह इन पंच पापोंमें निमग्न हो रहा है। और इनसे ही जन्म मरणके भयंकर दारुण दुःखोंको उठा रहा है। प्रतिक्रमण

करनेसे हिंसादि व्यापारोंसे ग्लानि, पापकर्मोंसे भय और अशुभ क्रियाओंमे विरक्त बुद्धि उत्पन्न होती है। प्रतिक्रमण करनेवाला भव्य जीव अपने प्रत्येक कार्यको विचारता है कि यह कार्य करनेसे मेरे पापाचरणोंकी वृद्धि होगी इस लिये मैं इसका त्याग करूं। मानसिक व्यापार व संकल्प विकल्पोंसे भी वह भयभीत होता है। प्रतिक्रमण करनेवाला जीव पंचेन्द्रियोंके विषयोंसे विरक्त होता है और ऐसे कारणकलापोंका परित्याग करता है जो विषयोंके बढानेवाले है। पापाचरण और विषयोंके सेवन करनेसे व्यामोह बढता है इसलिये आत्मबोध जागृत नहीं होता है। प्रतिक्रमण करनेसे पर पदार्थोंसे मोहका नाश होता है, इसलिये स्वात्मबोधकी प्राप्ति होती है जिससे श्री अरहंत परमात्माकी भक्ति, रत्नत्रयकी पवित्र भावना और स्वात्म-धर्ममें दृढता प्राप्त होती है, देह भोगादिकोंसे विरक्तता, कषायोंको विजय, सुख और शांतिका मार्ग विकाश होता है।

मन वचन और शरीरके व्यापारोंका पुद्गल परमाणुओं पर गहरा असर पडता है। आत्मामें कषायोंकी मलिनता होनेसे उन पुद्गल परमाणुओंका आत्माके साथ घनिष्ट सम्बन्ध हो जाता है और वही संबंध आत्म गुणोंका सुख और शान्ति घात करता है। इस लिये कषायोंकी विजय करना और मन वचन कायके व्यापारोंको रोकना ही यथार्थ सुख और शांतिका मार्ग है। प्रतिक्रमण करनेसे कषायोंकी विजय होती है, सुख और मार्ग विकाशको प्राप्त होता है इस लिये प्रतिक्रमण करना परमावश्यक कार्य है।

प्रतिक्रमण—स्वात्म शिक्षक है इससे अपनेआप अपने दुष्कृत्योंकी शिक्षा लीजासक्ती है। स्वात्म गुणोंके विकाश-की शिक्षा भी मिलती है।

प्रतिक्रमण करनेके लिये सबसे प्रथम बाह्यशुद्धिपर पूर्ण ध्यान देना चाहिये। क्योंकि शुभाशुभ निमित्त ही आत्माको भले बुरे मार्गमे ले जानेवाले होते हैं।

बाह्यशुद्धि-आत्मभावोंको विशुद्ध रखती है। इसलिये शरीर शुद्धि वचन शुद्धि और मन शुद्धि जिस प्रकार सर्वोत्तम रहे उस प्रकार बाह्यशुद्धिको करना चाहिये। **भोजन शुद्धि**-मनशुद्धिका कारण है इस लिये आहारपानशुद्धि, स्नानशुद्धि, वस्त्रशुद्धि, स्थानशुद्धि, जिनागमकी आज्ञानुसार विचार शुद्धि और वचन शुद्धि रखनी चाहिये। अपने भावोंको विशुद्ध करनेके लिये जो कुछ भले बुरे काम किये हों उनका विचार (स्मरण) करना चाहिये। भविष्यमें ऐसे बुरे कार्य न हों ऐसी दृढ प्रतिज्ञा करनी चाहिये। इस प्रतिज्ञाको दृढतर बनानेके लिये स्वात्म विश्वास-पूर्वक वीतराग प्रभुके गुणोंकी भावना निरतर विचारना चाहिये। अपने दुष्कृत्योंको निवेदन करना चाहिये, मनन करना चाहिये और परित्यागके लिये तत्पर रहना चाहिये।

प्रतिक्रमण करनेके प्रथम **लघु सामायिक पाठ** अवश्य करना चाहिये। नैष्ठिक श्रावक और मुनियोंके व्रत नियमसे होते हैं उनके व्रतोंमें अतीचारादि दोषोंका उद्भाव होना सभव है इसलिये उनको अपने व्रतोंकी विशुद्धिके लिये प्रतिक्रमण करना चाहिये। परन्तु पाक्षिक श्रावकोंके व्रतमें अभ्यास मात्र ही होता है अतएव

व्रतोंको दृढ बनानेके लिये तथा दोषोंके विचारके लिये प्रतिक्रमण करना नितान्त आवश्यक है एवं व्रतोंकी भावना भी व्रतका एक-देश पालन करना है। प्रतिक्रमण करनेसे व्रतोंकी (अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और परिग्रहत्याग) भावना पुष्ट होती है।

प्रतिक्रमण दैनिक, रात्रिक, पाक्षिक, चातुर्मासिक और सांव-त्सरिक भेदोंसे अनेक प्रकार है। चातुर्मासिक और सांवत्सरिक प्रतिक्रमणमें पूरी जाप्य १०८ देना चाहिये, अवशेषमें १८-२७-३६ भी देते हैं।

प्रतिक्रमण करनेमें "णमोकार मंत्र"को स्पष्ट बोलना चाहिये और जहांतक हो पंच परमेष्टीके गुणोंका चिंतवन विशेष ध्यान-पूर्वक करना चाहिये।

कितने ही स्थलों पर "णमो अरहंताणं" से प्रारंभकर **यावंति जिनचैत्यानि विद्यन्ते भुवनत्रये। तावंति सततं भक्त्या त्रिःपरीत्य नमाम्यहं"** यहां पर्यन्त पाठको पढना चाहिये।

प्रतिक्रमणका समय कमसे कम दो घड़ी है। इससे कम समयमें प्रतिक्रमण नहीं होता है। ये दो घडी प्रातःकाल मध्याह्नकाल और सायंकालके समयकी लेना चाहिये।

प्रतिक्रमण करते समय इन बातोंका विशेष ध्यान रखना चाहिये-

(१) व्यापार, गृह और इष्ट वियोग अनिष्ट संयोग संबंधी आकुलताको छोड देनी चाहिये।

(२) पुत्र, मित्र, भाई, बंधु, और कुटंब परिवारोंकी चिंता छोड़कर प्रतिक्रमण करना चाहिये।

(३) मनको वशकर सावधानीसे प्रतिक्रमण करना चाहिये।

(४) उत्साह और प्रेमसे प्रतिक्रमण करना चाहिये। आलस्य और अनादर प्रतिक्रमणके घातक हैं।

(४) आसन ठीक रखना चाहिये। परीग्रहका परिमाण करना चाहिये।

(५) कायोत्सर्ग—शरीरसे ममत्व त्याग करनेके लिये उपसर्गोंको जीतनेका प्रयत्न और अभ्यास डालना चाहिये।

(६) **णमोकारमन्त्र**, २७ श्वासोश्वासमें जपना चाहिये। शीघ्रता, अस्थिरता और कायरताको दूरकर प्रतिक्रमण करना चाहिये।

(७) प्रतिक्रमणके लिये जिनमुद्रा (नासिकाग्र दृष्टि) का धारण करना और शांतिसे विषयकषायोंको जीतनेका विशेष उद्योग करते रहना चाहिये।

(८) प्रतिक्रमण पाठको और उसके अर्थको मनन करते हुए प्रतिक्रमण करना चाहिये।

(९)समस्त जीवोंमें प्रेमभावना, गुणीजनोंमें भक्ति भावना, दुःखी (अज्ञान और कुचारित्रसे दुःखी) जीवोंमें करुणा भावना और मात्सर्य जीवोंसे साम्य भावना रखकर प्रतिक्रमण करना चाहिये।

(१०) अपने दोषोंका वार २ विचार करना चाहिये।

(११) जहांपर कायोत्सर्ग आवे वहापर णमोकार मंत्रकी जाप्य ९ वार देना चाहिये परन्तु वीर भक्तिमें १८–२७–३६–१०८ आदिका क्रम जैसा प्रतिक्रमण करना हो देनी चाहिये।

भवदीय–मुमुक्षु जनोंका दास–

नन्दनलाल जैन वद्य–ईडर।

॥ वंदे जिनवरं ॥

श्रावक प्रतिक्रमण।

निःसङ्गोऽहं जिनानां सदनमनुपमं त्रिः परीत्य भक्त्या।
स्थित्वा गत्वा निषिद्ध्युच्चरणपरिणतोऽन्तःशनैर्हस्तयुग्मम ॥
भाले संस्थाप्य बुद्ध्या मम दुरितहरं कीर्तये शक्रवंद्यं।
निंदा दूरं सदाप्तं क्षयरहितममुं ज्ञानभानुं जिनेन्द्रम् ॥ १ ॥

अर्थ—परिग्रहका परिमाणकर भव्य जीव अनुपम श्री जिनेंद्र देवके मंदिरमें जाकर प्रथम तीन प्रदक्षिणा करे, और भक्तिसे भगवान्‌के दक्षिण हाथ तरफ स्थित होकर 'जय जय जय,' निस्सही निस्सही निस्सही, इस प्रकार उच्चारणकर अति विनयसे अपने दोनों हाथोंको मस्तक ऊपर रखकर पापके नाश करनेवाले, निंदासे रहित, अविनाशीक, परमपवित्र और ज्ञानके सूर्य ऐसे श्री जिनराजको वारम्वार नमस्कारकर, उनके गुणोंका अनन्य-भावसे चिंतवन करे।

भावार्थ—प्रतिक्रमण (लगे हुए दोषोंकी विशुद्धि पूर्वक त्याग भाव) स्वात्मज्ञान विना नहीं होता है। स्वात्मज्ञान उत्पन्न होनेके लिये, मोहका त्याग करना नितांत आवश्यक है। मोहका त्याग—पर वस्तुओंका परिमाण अथवा पर वस्तुओंके त्याग करनेसे होता है। इस लिये प्रतिक्रमण करनेके प्रथम समस्त प्रकारके परिग्रहका परिमाण करना चाहिये।

इसका कारण एक यह भी है कि दोषोंकी निवृत्ति राग द्वेषके अभावसे होती है। राग और द्वेष दोनों पर वस्तुओंके

संबंधसे ही होते हैं। इस लिये परिग्रहका परिमाण करना अति आवश्यक है।

मोह रहित, परम विशुद्ध, परमशांत, अनंत सुख सहित, सर्वज्ञ और त्रिलोक पूज्य अरहंत भगवान् अमूर्तीक (आत्मा-अमूर्तीक होनेसे अतीन्द्रिय है) आत्माका प्रत्यक्ष अनुभव करा रहे हैं।

इस लिये प्रतिक्रमण करनेवाले भव्य जीवोंको स्वात्म-बोध प्राप्त होनेके लिये अरहंत प्रभुके गुणोंका चिंतवन करना चाहिये, जिससे स्वात्म-बोधकी प्राप्ति हो और दोषोंसे ग्लानि उत्पन्न हो, यद्यपि बद्धकर्म दोषोकी ग्लानिसे निर्झरित नहीं होते, तथापि पापाचरणसे भय, और आत्मोन्नतिकी विशुद्ध भावना स्वयमेव प्रकट होती है।

पडिक्कमामि भंते, इरियावहियाए, विराहणाए अणागुत्ते अइगमणे, णिग्गमणे ठाणेगमणे, चक्कमणे, पाणुग्गमणे विज्जुग्गमणे, हरिदुग्गमणे उच्चारपस्सवण खेलसिंहाणय वियडिपईठावणियाए जे जीवा ए-इंदिया वा, वेइंदिया वा, तेइंदिया वा, चउरिंदिया वा, पंचेंदिया वा, पण्णोल्लिदावा, पेल्लिदावा संघदिदावा, संघादिदावा, उद्दादिदावा, परिदाविदावा, किरिच्छिदावा, लेसिदावा, छिंदिदावा, भिंदिदावा, ठाण दोवा ठाणचंकमणदोवा, तस्सुत्तरगुण तस्सपायच्छित्तिकरणं तस्स विसोहिकरणं जाव अरहंताणं भयवंताणं णमोक्कारं पज्जुवासं करेमि तावकायं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि॥

भावार्थ–प्रतिक्रमण करनेका मुख्य कारण यह है कि आत्मामें साम्यभाव, आत्म विशुद्ध भावना और समस्त जीव मात्रमें मैत्री भावनाकी जाग्रति। और यह इसी लिये पाक्षिक, नैष्टिक, साधक और पूज्य मुनीश्वर निरंतर करते हैं। प्रतिक्रमणकी दृढताके लिये अणुव्रत, महाव्रत और समितियोंका पालन किया जाता है। अभ्यासके लिये समितिया श्रावकलोक भी न्यूनाधिकतासे पालन करते हैं। समितियोंका पालन करनेपर भी सूक्ष्म जीवोंकी बाधा होना संभव है। इस लिये प्रतिक्रमण करते समय यह विचार करना चाहिये कि यत्नाचार पूर्वक गमन करने पर मुझसे जिन जीवोंकी विराधना हुई हो यह मेरी कायरता है, मैं अपनी इस अशक्तिसे उत्पन्न हुए दोषोंकी आत्मग्लानि पूर्वक (मिच्छामि दोकडं) छोडना चाहता हूं।

प्रमाद और अज्ञानतासे गमन करनेमें, विना प्रयोजन इधर उधर भटकनेमें, व्यापारार्थ सचित्त भूमिपर गमन करनेमें, मोहसे समस्त प्रकारके आरंभ करनेमें, कुत्सित स्थान (जिस स्थानपर अनायास ही जीव बाधा हो) पर विहार करनेमें, विमत्म (कूद फाद आदि) गमन करनेमें, प्राणियोंसे परिपूर्ण भूमिपर गमन करनेमें, हरित वनस्पति शैवाल, कीचड, और अनंतकाय जिस भूमिमें निवास करते हों ऐसे स्थानपर गमन करनेमें, अनंत जीव वाली भूमिपर मलमूत्रका क्षेपण करनेमें, लार, कफ और थूक वाली भूमिपर कूदनेमें और आर्दित भूमिपर कार्य करनेमें जो एकेंद्रिय दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चार इन्द्रिय और पंचेन्द्रिय जीवोंको मैंने पीडा दी हो, पेलिकर दुख दिया हो, एकत्रितकर त्रास दिया

हो, संघट्टितकर नाश किये हों, उपद्रवकर आघात पहुंचाया हो, संतापित किये हों, क्लेशित किये हों, ढँसिदिये हों, लीपदिये हों, (पाद) पांवसे कुचलदिये हों, घसीटकर हानि पहुंचाई हो, लकडीसे पीटे हों, अस्त्रशस्त्रसे छेदे हों, अंगोपांगोंको काटा हो, स्थानांतरकर दुखित किये हों, मानसिक पीडा दी हो, अपहरणकर दुःख दिया हो, वचनसे मर्म छेदन किया हो। कुमार्गेमें लगाकर पतित किये हों और मिथ्या मार्गका उपदेशकर अनंत दुःखोंके समुद्रमें गिराये हों, इत्यादि अनेक प्रकार जीवोंको कष्ट दिया हो उन समस्त कर्मोंका मै इस समय विशोधन करता हू। अपनी अज्ञान और प्रमाद दशासे क्षोभित होता हूं। आत्मग्लानिसे भयभीत हू। हिंसाके कार्योंसे डरता हूं। मेरी आत्मासे अव किसी जीवको बाधा न हो ऐसी दृढ भावना "सत्वेषु मैत्री"का वार २ चिन्तवन करता हूं। आत्मशक्तिका ऐसा विकाश चाहता हूं कि जिससे मैं सव जीवोके साथ साम्यभाव प्रगट कर सकू और सवका उत्कर्ष धारण कर सकू।

मैं अपने कृत कर्मों (किये हुए कर्मों)का पश्चात्ताप करता हूं मेरेसे जिन जीवोंको दुख प्राप्त हुआ है उसके लिये मैं समवेदना प्रकट करता हूं। और मेरे मनने इतनी विशुद्धि हो कि अव मुझसे भविष्यमें ऐसा अनिष्ट किसी जीवका न हो। जब तक भगवान् अरहंत प्रभुका प्रतिपादित णमोकार मंत्र नववार स्पष्ट उच्चारण न कर लूं तवतक समस्त पापकर्म, दुष्टकृत्य और शरीरसे ममत्व भावको छोडता हू।

(नोट—९ वार णमोकार मंत्रकी जाप २७ श्वासोश्वासमें देनी)

ईर्यापथे प्रचलताद्य मया प्रमादा-
देकेन्द्रियप्रमुखजीवनिकायबाधा ॥
निर्वर्त्तिता यदि भवेदयुगांतरे वा
मिथ्या तदस्तु दुरितं गुरुभक्तितो मे ॥१॥

अर्थ—ईर्यापथ पूर्वक गमन करनेपर भी आज मुझसे प्रमाद और अज्ञानके वश एकेन्द्रिय प्रभृति जीवोंकी जो विराधना हुई हो, वह अरहंत परमात्माकी भक्तिसे मिथ्या हो।

करचरणतनुविघातादटतो निहितः प्रमादतः प्राणी।
ईर्यापथमिति भीत्या मुञ्चेत्तद्दोष हान्यर्थम् ॥ २ ॥

अर्थ—शरीर और हाथ पाव आदि अवयवोंके इधर उधर हिलानेसे, प्रमादवश जिन जीवोंको कष्ट हुआ है, वह मैं अपनी ईर्यापथकी विशेष शुद्धिके लिये प्रतिक्रमण करता हूं। और उससे उत्पन्न हुए पापोंको मिथ्या चाहता हूं।

इच्छामि भंते इरियावहियस्स आलोचेउं पुव्वुत्तर दक्षिण पच्छिम चउदिसु विदिसासु विहरमाणेण जुगंतर दिट्ठिणा दट्ठवा डवडवचरियाए पमाददोसेण पाणभूदजीवसत्ताणं उवघादो कदो वा कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥३॥

अर्थ—हे प्रभो! अब मैं पाप कर्मोंसे अत्यंत भयभीत हो गया हूं। इस लिये चारों दिशा और विदिशाओंमें ईर्यापथ पूर्वक गमन करते हुए जो पापकर्म मुझसे हुआ है उसकी मैं बार २ आलोचना करता हूं। प्रमाद तथा दृष्टिदोषसे जीवोंका घात

स्वयं किया हो, दूसरेसे कराया हो, अन्यके करनेमें भला माना हो इत्यादि सब कार्योंसे उत्पन्न हुए मेरे दोष मिथ्या हों।

प्रतिक्रमणकी महिमा।

जीवे प्रमादजनिताः प्रचुराः प्रदोषाः।
यस्मात्प्रतिक्रमणतः प्रलयं प्रयांति॥
तस्मात्तदर्थममलं गृहियोधनार्थं।
वक्ष्ये विचित्रभवकर्मविशोधनार्थम्॥१॥

अर्थ—जीव प्रमाद और अज्ञानतासे अनंत (दोष) पाप कर्म करते हैं। प्रतिक्रमण करनेसे उन दोषोंकी शांति हो जाती है इस लिये कृत कर्मोंकी शुद्धिके लिये यह प्रतिक्रमणका स्वरूप गृहस्थोंके लिये प्रतिपादन किया जाता है। भावार्थ—प्रतिक्रमण करनेसे मनकी शुद्धि, किये हुए कर्मोंकी निर्जरा, और दोषोंसे भय उत्पन्न होता है।

पापिष्ठेन दुरात्मना जडधिया मायाविना लोभिना।
रागद्वेषमलीमसेन मनसा दुष्कर्म यन्निर्मितम्॥
त्रैलोक्याधिपतेर्जिनेन्द्र भवतः श्रीपादमूलेऽधुना।
निंदापूर्वमहं जहामि सततं वर्वर्तिषुः सत्पथे॥ २॥

अर्थ—हे त्रैलोक्य प्रभो! हे जिनेन्द्र! मैं बडा पापी, दुष्ट, अज्ञानी (जडबुद्धि), मायाचारी और लोभी हूं। मैंने अपने मनको रागद्वेषसे मलिनकर अनंत दुष्कर्म किये हैं। हे जिनराज! अब मैं आपके चरण कमलोंकी शरण लेकर आपके समक्ष उपस्थित

हुआ हूं। और सन्मार्गमें चलनेके लिये वाध्य होता हूं तथा भविष्यमें मुझसे कुत्सित कर्म न हों, ऐसी मेरी इच्छा है।

खम्मामि सव्वजीवाणं सव्वे जीवा खमंतु मे।
मैत्ती मे सव्वभूदेसु वैरं मज्झ ण केणवि ॥ ३ ॥

अर्थ—मैं समस्त जीवोंपर क्षमा करता हूं। और मुझे भी सब जीव क्षमा करो। मेरी समस्त जीव मात्रमें मित्रता हो। मेरे साथ किसीका भी वैर नही है।

भावार्थ—साम्यभाव धारण करनेके लिये सबसे प्रथम यह आवश्यक है कि अपने मनकी अत्यंत विशुद्धि करे और वह इस प्रकार कि मनको विकारित करनेवाले क्रोध, मान, माया, लोभ, ईर्षा आदि दुर्गुणोंको हृदयसे निकाल डाले, किसीने भी अपना अनिष्ट किया हो तो भी उसके ऊपर क्षमा धारण करे। इतना ही नहीं किन्तु उसके साथ बंधुत्व भाव रहे। कदाचित् अपनेसे किसीका अनिष्ट होता हो तो उससे अपने अपराधकी क्षमा चाहे और भविष्यमें जीवमात्रको अपना बंधु समझकर किसीसे विरोध न कर साम्यभाव धारण करना चाहिये।

रागबंध य दोषं च हरिसं दीणभावयं।
उस्सुगत्तं भयं सोगं रदि मरिदं च वोस्सरे ॥४॥

अर्थ—मैं रागसे किया हुआ कर्मबंध, अनिष्ट संयोग और इष्ट वियोग होनेसे उत्पन्न हुआ द्वेष, विषय प्राप्तिसे उत्पन्न हुआ और दीनता, अभिमानसे उत्पन्न हुआ मदोन्मत्तता, इस लोक और परलोक सम्बन्धी भय, इष्ट वियोगसे उत्पन्न हुआ शोक, परवस्तुकी आकांक्षा रूप मनोविकारसे उत्पन्न हुआ रतिभाव,

और अरतिभाव आदि समस्त विकार भावोंको छोडता हूं। इस प्रकार समस्त पर द्रव्यसे राग-द्वेष, हर्ष-विषाद, आदि व्यामोहताका परित्याग करे। और आत्माकी परम विशुद्ध अवस्थाका विचार करे।

हा दुट्ठकयं हा दुट्ठ चिंतियं भासियं च हा दुट्ठ।
अंतो अंतो डज्झमि पच्छुत्तावेण वेयंतो ॥५॥

अर्थ-हाय ! हाय !! मैंने दुष्ट कर्म किये, हाय ! हाय !! दुष्ट कर्मोंका वारवार चिंतवन किया। हाय ! हाय !! मैंने दुष्ट मर्मभेदक वचन कहे। इस प्रकार मनवचन और कायकी दुष्टतासे मैंने अनंत कुत्सित कर्म किये। इन कार्योंके बदले अब मुझे अत्यंत पश्चताप होता है और इस अज्ञान दशामे मेरा अंतःकरण अत्यंत क्लेशित हो रहा है। मैं कृत कर्मोंका जैसे स्मरण करता हूं वैसे मुझे मेरी आत्मापर अतिशय ग्लानि उत्पन्न होती है और पश्चाताप होता है।

नोट—परम पवित्र अरहंत भगवान्‌के समक्ष इस प्रकार अपने मन वचन कायसे किये हुए दोषोंको कहे, आलोचना करे, गर्हा करे, और आत्मनिंदा पूर्वक प्रतिक्रमण करे।

दव्वे खेत्ते काले भावे य कदा वराहसोहणयं।
णिंदणगरहणजुत्तो मणवचिकायेण पडिक्कमणं ॥६

अर्थ-द्रव्य क्षेत्र काल और भावके निमित्तसे किसी जीवकी विराधना अथवा प्राणपीडा हुई हो, वह मैं आत्मनिंदा और गर्हा (दोषोंको चिंतवन पूर्वक ग्लानिका होना) पूर्वक मन वचन कायकी शुद्धिसे परित्याग करता हूं।

एइंदिय वेंदिय तेइंदिय चउरेंदिय पचेंदिय पुढ-विकाइय, आउकाइय, तेउकाइय, वाउकाइय, वण-प्फदिकाइय, तसकाइय एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

अर्थ—एकेन्द्रिय जीव (जिनके एक स्पर्श ही इन्द्रिय होती है) दो इंद्रिय जीव (जिनके स्पर्श और रसना ये दो इंद्रिय हों) तीन इन्द्रिय जीव (जिनके स्पर्श, रसना और घ्राण ये तीन इन्द्रिय हों) चार इन्द्रिय जीव (जिनके स्पर्श, रसना, घ्राण और चक्षु ये चार इन्द्रिय हों) पाच इन्द्रिय जीव (जिनके स्पर्श, रसना, घ्राण, चक्षु, और श्रोत ये पांच इन्द्रिय हों), पृथ्वीकाय, जलकाय, अग्निकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय और त्रस (दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चार इन्द्रिय और पञ्चेन्द्रिय जीवोंको त्रस कहते है ।) कायके जीवोंको मैंने स्वतः मारे हों, दूसरेसे मराये हों, अन्यके मारने पर अनुमोदना की हो, अथवा उक्त प्रकारके जीवोंको सताप दिया हो, दूसरेसे संताप दिलाया हो, अन्यके संतापित करनेमें सहमत हुआ हो। अथवा प्राणियोंकि अंगोपांगका वियोग किया हो, कराया हो, करतेको भला माना हो इत्यादि अनेक प्रकार मुझसे जिन जीवोंको पीड़ा हुई है, उससे उत्पन्न हुए पाप कर्मोका परित्याग करता हू। मन वचन काय और कृत कारित अनुमोदनासे जिन जीवोंका घात मुझसे हुआ है वह निरर्थक हो।

दंसण वयसामाइय पोसह सचित्त रायभत्तीय।
बम्भारंभ परिग्गह अणुमणमुद्दिठ देसविरदो य॥
एयासु यथा कहिद पडिमासु पमादाइकया।
इचारं सोहणट्ठं छेदोव्वट्ठावणं होउ मज्झं॥

अर्थ—दर्शन १ व्रत २ सामायिक ३ प्रोषधोपवास ४ सचित्तत्याग ५ रात्रिभुक्तत्याग ६ ब्रह्मचर्य ७ आरंभत्याग ८ परिग्रहत्याग ९ अनुमतित्याग १० और उद्दिष्टत्याग ११ इस-प्रकार श्रावककी ग्यारह प्रतिमा होती है। इन प्रतिमाओंका व्यक्त रूप अथवा समस्तरूप अभ्यासरूप अथवा व्रतरूप पालन पाक्षिक, नैष्ठिक श्रावक करते है। प्रतिमा धारणा चाहे किसी प्रकार हो परंतु संभव है कि प्रमाद और अज्ञानसे अतीचार—अनाचार अथवा व्रतभंगरूप दोष लगे हों, उसकी मैं उपस्थापना करता हूं।

अरहंत सिद्ध आयरिव उवज्झाय सव्वसाहु सक्खियं सम्मत पुव्वगं सव्वदं दिढव्वदं समारोहियं मे भवदु मे भवदु मे भवदु॥

-अर्थ—अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और सर्व्व साधु इन पंच परमेष्ठीकी साक्षीपूर्वक सम्यक्त सहित उत्तम व्रतोंकी दृढता मेरे हो। सम्यग्दर्शन सहित सदाचारकी प्राप्ति मेरे हो।

देवसियं पडिक्कमणाए सव्वाइचार सोहिणि-

नोट—१ प्रतिक्रमण चार प्रकार होता है। दैवसिक (दि-वस संबंधी), रात्रिक (रात्रि संबधी), पाक्षिक (१५ दिन संबंधी), (मासिक—चातुर्मासिक और सांवत्सरिक) यदि दिवसका करना है तो देवसिय शब्द लगाओ। यदि रात्रिका प्रतिक्रमण करना है तो

मित्तं पुव्वापरियक्कमेण आलोयण सिरी सिद्ध भत्ति काउस्सग्गं करेमि।

राइय शब्द लगाओ। जैसा प्रतिक्रमण करना हो वैसे शब्दकी योजना यहां पर करनी चाहिये।

२ अतीचार—व्रतादिकोंका पालन करनेमें बाह्याभ्यंतर कारणोंके लिये व्रतोंकी दृढता रखते हुए भी कुछ भंगरूप दोषोंका उत्पन्न करना अतीचार है। भंगाभंगवृत्तिको अतीचार कहते हैं।

अनाचार—मनमें कुछ विकार होना। और ऐसे प्रमादसे व्रतमें शिथिलताका होना अनाचार है।

व्रतभंग—व्रतका एक देश छेद करना व्रत भंगता है। और अनर्गल (स्वेच्छाचार पूर्वक) प्रवृत्ति होकर स्वच्छंद रहना व्रत नाशता है।

व्रतका पालन—मन वचन काय और कृत कारित अनुमोदनासे होता है। व्रतोंके पालन करनेके लिये बाह्याभ्यंतर शुद्धिकी विशेष आवश्यकता होती है। आभ्यंतर शुद्धिके लिये मनकी पवित्रता प्रधान कारण है। मानसिक ग्लानिसे ही प्राय: व्रतोंमें अतीचार लगते हैं। इस लिये मनको सदैव शुद्ध रखना चाहिये।

बाह्य शुद्धि भी व्रतोंको स्थिर करनेमें प्रधान कारण है। चंचल बुद्धि कुछ सहज निमित्तके मिलने पर ही चलित हो जाती है। और मन तथा आत्माके ऊपर अपना अधिकार जमा लेती है। यह सब जानते हैं कि संगतिका असर तत्काल होता है "चिरंतनाभ्यासनिबंधनेरेता गुणेषु दोषेषु च जायते मति." इसलिये बाह्यशुद्धि पर ध्यान रखना चाहिये।

अर्थ–दिवस सवधी शारीरिक, मानसिक और वाचनिक कार्य करनेमें जो दोप मैंने किये हों, उनका प्रतिक्रमण करता हूं। और अपने मनकी विशुद्धिके लिये अपने किये हुए दोषोंकी वार २ आलोचना करता हूं। दोषोंसे सर्वथा मुक्त श्री सिद्ध परमात्माका स्वरूप चिन्तवन कर सिद्ध भक्तिमें लीन होता हूं।

नोट–सिद्ध भक्तिके लिये ९ वार णमोकार मंत्रकी जाप देना चाहिये। और–णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आयरीयाण, णमो उवज्झायाणं णमो, लोए सव्वसाहूणं। चत्तारि मंगलं, अरहत मंगलं, सिद्धमंगलं, साहूमंगलं, केवलिपण्णतोधम्मोमंगलं। चत्तारि लोगोत्तमा, अरहंत लोगोत्तमा, सिद्ध लोगोत्तमा, साहुलोगोत्तमा केवलिपण्णतोधम्मोलोगोत्तमा। चत्तारिसरणं पव्वज्जामि, अरहंत सरणं पव्वज्जामि, सिद्धसरणं पव्वज्जामि, साहुसरण पव्वज्जामि, केवलि पण्णत्तो धम्मो सरणं पव्वज्जामि।

अड्ढाईदीवदो समुद्देसु पण्णारस कम्मभूमीसु जाव अरहंताणं भयवंताणं आदियराणं तित्थयराणं जिणाणं जिणोत्तमाणं केवलियाणं सिद्धाणं बुद्धाणं परिणिव्वुदाणं अंतयडाणं पारयडाणं धम्मायरियाणं

---

१ अढाई दीप और पन्द्रह कर्मभूमिमें होनेवाले सयोग केवली, (अरहत) संसारके भयको नाश करनेवाले तीर्थंकर, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, और सर्व साधु ये पाच परमेष्ठी हैं। ये सत्य मार्गका प्रत्यक्ष अनुभव कराते हैं। इसलिये इनकी साक्षी पूर्वक सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्रको धारण करता हू। दूसरोंको इस सत्यमार्ग पर चलनेका उपदेश करूंगा। मुझसे इस मार्गमें चलते हुए अतीचार आदि दोष लगे हों उनकी शुद्धिके लिये मन वचनकायकी विशुद्ध भावनासे आत्मनिंदा पूर्वक त्याग करता हू।

धम्मदेसयाणं धम्मणायगाणं धम्मवरचाउरंगचक्कव-
ट्टीणं देवादिदेवाणं णाणाणं, दंसणाणं चरित्ताणं
सदा करोमि किरियम्मं करेमि भंत्ते पडिक्कमणं साव-
ज्जोगं पच्चक्खामि जावनियमं तिविहेण मणसा
वचिया कायेण ण करेमि ण कारेमि अण्णंपि।
करंतण समणुमणामि तस्स भंत्ते अइचारं पडिक्क-
मामि णिंदामि गरहामि अप्पाणं जाव अरहंताणं
भयवंताणं णमोक्कारं पज्जुवासं करेमि तावकायं
पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि।

थोस्सामि हं जिणवरे तित्थयरे केवली अणंत जिणे।
णरपवर लोयमहिए विहुयरयमले महप्पणे॥
लोयस्सुज्जोययरे धम्मं तित्थंकरे जिणे वंदे।
अरहंते कित्तिस्से चउवीसं चेव केवलिणो॥

---

१ कर्म मल रहित, त्रिलोक पूज्य और ज्ञानसे परिपूर्ण तीर्थंकर, केवली भगवान् और केवली प्रणीत जिन धर्मको पुनः पुनः स्मरण कर वंदना करता हूं। ऋषभादि वीरान्त चतुर्विंशति देवको मन शक्तिसे वंदना करता हूं। ये चौवीस भगवान् जन्म मरणादि समस्त दोष रहित, परम शांति, अनंत सुखसंपन्न, मंगलमय, लोकोत्तम, और शरणभूत हैं। सिद्ध परमात्मा भी समस्त कर्म मल रहित, परम विशुद्ध, शुद्ध चैतन्य रूप, अनंतगुणोंसे सिद्ध हैं। शुद्धात्माका प्रत्यक्ष दर्शन इनकी भक्तिसे प्राप्त होता है। तीर्थंकर केवली, परम शांतरसकी मूर्ति होनेसे योगी हैं। जिन चैत्यालय यह धर्मका आयतन है। इसलिये मैं प्रतिक्रमण करते समय तीर्थंकर, केवली, सिद्ध जिन धर्म, जिन चैत्यालयको वंदना करता हूं।

उसहमजियं च वंदे संभवमभिणंदणं च ।
सुमइं च पोमप्पहं सुपासं जिणं च चंदप्पहं वंदे ॥
सुविहिं च पुप्फयंतं सीयलसेयं च वासुपूज्जं च ।
विमलमणंतं भयवं धम्मं संतिं च वंदामि ।
कुंथुं च जिणवरिंदं अरं च मल्लिं च मुणिसुव्वयं च ।
णमिं वंदे अरिट्ठणेमिं तहपासं वड्ढमाणं च ।
एवमए अभित्थुया विहुयरयमला पहीणजरमरणा ॥
चउवीसंपि जिणवरा तित्थयरा मे पसीयंतु ।
कित्तिय वंदिय महिया एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा ॥
आरोगणाणलाहं दिंतु समाहिं च मे बोहिं ।
चंदेहिं णिम्मलयरा आइच्चा उहियं पयासंता ।
सायरमिव गंभीरा सिद्धासिद्धं मम दिशंतु ।
यावंति जिन चैत्यानि विद्यन्ते भुवनत्रये ।
तावंति सततं भक्त्या त्रिः परीत्य नमाम्यहं ॥

नोट—'णमो अरहताणं' यहासे प्रारंभ कर "त्रिपरीत्य नमाम्यहं" पर्यन्त मूल पाठको पढ़कर नव वार नमस्कार मन्त्रकी जाप्य देना चाहिये। और यह भी स्मरण रखना चाहिये कि जिस २ स्थान इस पाठका उल्लेख किया हो वहा पर यह पाठ पढ़कर जाप देकर कायोत्सर्ग करना चाहिये।

श्रीमते वर्द्धमानाय नमो नमितविद्धिषे ।
यद् ज्ञानान्तर्गतं भूत्वा त्रैलोक्यं गोष्पदायते ॥

अर्थ–मोहादि भयंकर शत्रुओंका नाश करनेवाले, और लोकको जाननेवाले ऐसे श्री वर्द्धमान भगवानके लिये नमस्कार है।

तवसिद्धे णयसिद्धे संजमसिद्धे चरित्तसिद्धेय ।
णाणम्मि दंसणम्मिय सिद्धे सिरसा णमंसामि ॥

अर्थ—तप, नय ज्ञान, संयम, चारित्र, ज्ञान और दर्शनादिसे सिद्ध पदको प्राप्त हुए सिद्ध परमात्माको नमस्कार है ।

इच्छामि भंते सिद्धभत्ति काउस्सग्गो कउ तस्सा लोचेउं सम्मणाण सम्मदंसण सम्मचरित्त जुत्ताणं अठ विहकम्म विप्प मुक्काणं अट्ठ गुणाविह्कम्मविप्पमुक्काणं, अट्ठगुण संपण्णाणं उड्ढलोगम्मिथयम्मि । पयड्ढियाणं तव सिद्धाणं णयसिद्धाणं संजमसिद्धाणं चरित्तसिद्धाणं सम्मणाण सम्मदंसण सम्मचरित्त सिद्धाणं अतीदाणागद वट्टम्माणकाल तय सिद्धाणं सव्व सिद्धाण सयाणिच्च कालं अंचेमि पूज्जेमि वंदामि णमसामि दुक्खक्खउ कम्मक्खउ वोहिलाहो सुगइ गमण समाहिमरणं जिणगुण सपत्ति होउ मज्झं ।

इच्छामि भंते देवसिय आलोचेउ सिद्धभत्ति कायोत्सग्ग करोमि ।

अर्थ—हे भगवन् ! मैं सिद्धभक्ति धारण करनेके लिये दिवस संबंधी कृत कर्मोंकी आलोचना करता हूं । सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्रमयी, आठ कर्म रहित, आठ गुण सहित, लोकके अंत भागमें विराजमान तप ज्ञान संयम सम्यक् चारित्र दर्शन और परमध्यानादि उत्तम गुणोंसे सिद्ध अवस्थाको प्राप्त हुए भूत, भविष्य और

वर्तमान काल संबंधी समस्त सिद्ध भगवानकी मैं अभ्यर्थना करता हूं, पूजा करता हूं, गुणोंका चितवन करता हूं, वदना करता हूं, नमस्कार करता हूं। सिद्ध भक्तिसे मेरे दुःखोंका नाश, सम्यग्दर्शनज्ञान चारित्रकी प्राप्ति, सुगति गमन, समाधिमरण और जिनगुण प्राप्ति हो। भावार्थ–मेरी आत्मा सिद्धात्माके समान शुद्ध अनंत गुणमय, सम्यग्दर्शन ज्ञानचारित्रमयी निष्कलक और अक्षय है। परंतु कर्ममल विकृत रूप हो रहा है। "मेरी आत्मा परम शांत और सुखी हो" इस भावनाकी सिद्धिके लिये सिद्धभक्ति धारण करता हूं। इस प्रकार सिद्धोंके गुणोंका चिन्तवन कर आत्मस्वरूपका विचार करते हुए अपने दोषोंकी आलोचना करे।

(९ वार नमस्कार मंत्रकी जाप्य देकर सिद्ध भक्तिका कायोत्सर्ग धारण करे।)

श्रावककी ग्यारह प्रतिमाओंका स्वरूप।

पंचुंबर सहियाइं सत्तवि वसणाइं जो विवज्जइ।
सम्मत विशुद्धमइसो दंसण सावउ भणिओ ॥१॥

अर्थ–पाक्षिक, नैष्टिक और साधक इस प्रकार श्रावकके तीन भेद हैं। पाक्षिक श्रावक–वह हो सक्ता है जो सबसे प्रथम श्री जिनेंद्र देवके प्रतिपादित सात तत्वोंका यथार्थ श्रद्धान करे। क्योंकि धर्मकी मूल भीत्ति श्रद्धा है–विश्वास है। विना इसके धर्मपथका अनुयायी हो नहीं सक्ता। इसका कारण एक यह भी है कि सुख–शांति और प्रेम ये तीनो धर्मके अग है और ये विना

विश्वासके यथार्थ नहीं हो सक्ते है। इस लिये जिन आज्ञाको हृदयसे धारण करता हुआ कषायोंके घटानेके लिये (कषायें ही आत्मस्वरूपके प्रकट होनेमें बाधक है) सदाचारका पालन करे। पाक्षिक श्रावक "जिनदर्शन १, जलगालन २, रात्रिभोजन त्याग ३, पांच उदंबर (बडफल–पीपलफल–कटूमर–पाकरफल–उदंबर) त्याग ४, मद्यत्याग ५, मधुत्याग ६, मासत्याग ७ और जीव दया प्रतिपालन ८ ये आठ मूल गुणोंका पालन करता है। अभ्यासके लिये पाच अणुव्रत (हिंसा–झूठ–चोरी–कुशीलका त्याग और परिग्रहका परिणाम), तीन गुणव्रत, चार शिक्षाव्रत आदि व्रतोंका पालन करता है। सप्त व्यसनों (जुआ खेलना, मांस भक्षण, मद्य पान, शिकार खेलना, चोरी करना, वेश्यागमन करना और पर स्त्री सेवन करना) को उभय लोकमें दुःखदायक समझकर सेवन नहीं करता है। अभक्ष सेवन भी नहीं करता है। बाह्य और आभ्यतर शुद्धिके लिये पूर्ण प्रयत्नशील होता है। षट् आवश्यक (देव पूजा १ गुरु उपासना २ स्वाध्याय करना ३ संयम पालन करना ४ तप धारण करना ५ और सुपात्रको दान देना ६) कर्मोंको नियमित करता है। ये सब कर्तव्य पाक्षिक श्रावकके है। इन कर्तव्यके साथ धार्मिक नीति और व्यवहार नीति भी पालन करना चाहिये। सबसे प्रथम पाक्षिक श्रावकको २५ दोष रहित सम्यक् दर्शन निर्दोष पालन करना चाहिये।

नैष्ठिक श्रावक उक्त समस्त कर्तव्योंको पूर्ण रूपसे पालन करता है तथा सम्यग्दर्शनकी विशुद्धि विशेष रखता है। ग्यारह प्रतिमायें नैष्ठिक तथा साधक श्रावककी होती है। दर्शन प्रतिमा

धारण करनेवालोंके भी उक्त कर्तव्य हैं।

पंच अणुव्वयाइं गुणव्वयाइं हवंति तह तिणि।
सिक्खाव्वयाइं चत्तारि विजाणि विदियम्मि वाणम्मि

अर्थ—पांच अणुव्रत, तीन गुणव्रत, और चार शिक्षाव्रतोंको जो नियमसे पालन करता है वह व्रत प्रतिमा धारक है।

पाणादिवादि विरदि सच्च मदत्तस्स वज्जणं चेव।
थुलयड बंभचेरं इच्छाये गंथपरिमाणं ॥३॥

अर्थ—स्थूल हिंसा-झूंठ-चोरी कुशीलका त्याग और परिग्रहका परिमाण ये पांच अणुव्रत है।

जे तसकाइय जीवा पुव्व णिद्दिठाण हिंसि दव्वा।
ए इंदिय विणुकारण तं पढमं वदं थूलं ॥४॥

अर्थ—जो आखोंसे दीख सकें, ऐसे त्रस जीवोंको नही मारना तथा विना प्रयोजन एकेन्द्रिय जीवोंकी हिंसा नहीं करना सो प्रथम अहिंसाणुव्रत है।

अलियण जंपणीयं पाणिवह करंतु सच्चवयणपि।
रायेण य दोसेण य णेय विदिय वयं थूल ॥ ५ ॥

अर्थ—राग द्वेषसे अनीति वचन नहीं कहना, और जिन वचनोंके कहनेसे किसी जीवकी हिंसा होती हो ऐसा सत्य वचन भी नही बोलना सो सत्याणुव्रत है।

पुरगामि पट्टणाइसु पडियं णट्ठच णिहियवीस्सरीयं।
परदव्वमागिण्ह तस्स होय थूल वय तिद्दिय ॥६॥

अर्थ-नगर, ग्राम और चोडाया आदिमें पडा हुआ, भूला हुआ, गिराहुआ, पराया (अन्यका) द्रव्य नहीं लेना सो अचौर्याणुव्रत है।

पव्वेसु इत्थि सेवा अणंगकीडा सयाविवज्जंतो।
थूलयड वंभचारी जिणेहिं भणिओ पवयणम्मि ७॥

अर्थ-पर्वके दिवसोंमें सर्वथा स्त्री मात्रका त्याग करना, परस्त्रीका सेवन नहीं करना, और अनग क्रीडा नहीं करना सो ब्रह्मचर्याणुव्रत है।

जं परिमाणं कीरइ धण धाण्ण हिरण्ण कंचणाईणं।
तं जाण पंचमवयं णिदिट्ठ सुवासयाज्जयणे ८॥

अर्थ-धन, धान्य, रत्न, सुवर्ण आदि परिग्रहका परिमाण करना सो परिग्रह परिमाण नामका अणुव्रत है। इस प्रकार ये पाच अणुव्रत हैं।

पुव्वुत्तरदक्खिण पच्छिमासु काऊण जोयण पमाणं।
परदो गमणणियत्ती दिसि गुणव्वयं पढमं॥ ९॥

अर्थ-पूर्वोत्तरादि चारों दिशामें परिमाणकर उसके बाहर नहीं जाना सो प्रथम गुणव्रत दिग्व्रत है।

वयभंगकारणं होई जम्मि देसम्मि तत्थ णियमेण।
कीरइ गमणणियत्ती तं जाण गुणव्वय विदियं॥१०॥

अर्थ-दिग्व्रतके आभ्यंतर दिशाओंकी मर्यादाकर बाहर नहीं जाना तथा जिस देशमें व्रतके भंग होनेकी संभावना हो ऐसे देशमें नहीं जाना सो द्वितीय देशव्रत नामक गुणव्रत है।

अयदंड पास विक्किय कूडतुला माणकूड परिमाणं।
जं संग हो ण कीरइ तं जाण गुणव्वयं तिदियं ॥११॥

अर्थ—अनर्थदण्ड पापोपदेश, हिंसादान, दु:श्रुति, अपध्यान और प्रमादचर्या भेदसे पाच प्रकार है। तथापि इसके अनत भेद होते हैं, इन सबका यही अभिप्राय है कि जिन कार्योंसे कुछ प्रयोजन विशेष सिद्ध न होता हो और हिंसा तथा क्लेश परिणाम अधिक होते हों ऐसे लोहेके शस्त्र, लाठीं आदि हिंसाका व्यापार, झूठी तराजू, खोटे वाट आदिसे व्यापार आदिका त्याग करना सो तृतीय गुणव्रत है।

जं परिमाणं कीरइ मंडण तबुल गंध पुप्फाणं।
तं भोयविरइ भणिय पढम सिक्खावयं सुत्ते ॥१२॥

अर्थ—भोग और उपभोगसे विषयोंका सेवन होता है। भोग उसे कहते हैं जो एकवार भोगनेमें आवे। शरीरको शृंगार करनेवाली चीजें, पान, सुगधित पदार्थ तेल इत्र पुष्पादिका परिमाण करना सो भोगविरति शिक्षाव्रत है।

सगसत्तीए महिला वत्थाभरणाण जंतु परिमाणं।
तं परिभोय णिव्वुत्ती विदियं सिक्खावयं जाणे १३

अर्थ—बार२ भोगनेमें आवे उसे उपभोग कहते हैं। उपभोगरूप स्त्री, वस्त्र, आभरण आदिके सेवन करनेका नियम करना सो दूसरा शिक्षाव्रत है।

अतिहिस्स संविभागो तिदियं सिक्खावयं मुणेयव्वं।
तत्थ वि पंचाहियारा णेया सुत्ताण मग्गेण ॥१४॥

अर्थ--उत्तम मध्यम और जघन्य भेदसे पात्र तीन प्रकार हैं। पात्रमें च्यार प्रकारका दान देना तथा चैत्य, चैत्यालय, सिद्ध-क्षेत्र, शास्त्र, स्वाध्यायालय, विद्यालय, औषधालयमें दान देना सो तृतीय शिक्षाव्रत है।

धरिऊण वत्थमेत्त परिग्गहं छंडिऊण अवसेसं।
सगिहे जिणालये वा तिविहाहारस्स वोस्सरणं॥
जंकुणदि गुरुपयासे सम्ममालो इऊण तिविहेण।
सल्लेहणं चउत्थं सुत्ते सिक्खावय भणियं॥

अर्थ--वस्त्रमात्र परिग्रहको रखकर अवशेष समस्त परिग्रहका त्यागकर अपने घरमें अथवा जिनालयमें सल्लेखना धारण करे। व्रतफल सिद्धि समाधि मरणसे ही होती है इतना ही नहीं किंतु समाधि मरण आत्म सिद्धिका अंतिम उपाय है--सुगतिका बीज है। समाधि मरण विधि--प्रतिकार रहित मरणके कारण उपस्थित होने पर साम्यभाव और शांतिसे धैर्यपूर्वक, क्रोधादि विकार रहित शरीरका विसर्जन करना समाधि मरण है। और उसकी सिद्धिके लिये क्रमसे तीन प्रकारके आहारोंका त्याग कर गर्म जल अथवा तक्र (छाछ--मट्ठा) का सेवन करे, और अनावश्यक्ता होने पर उसका भी त्याग करे। अपनी पर्यायमें किये हुए भले बुरे कर्मोकी आलोचना पूर्वक प्रतिक्रमण करे, पश्चात्ताप करे, और सबसे क्रोधादि विकार भावोंकी क्षमा मांगकर शांतिसे णमोकार मंत्रका ध्यान धरता हुआ शरीरको छोडे। यह चोथा सल्लेखना नामका शिक्षाव्रत है। इस प्रकार दूसरी प्रतिमा धारण करनेवाला श्रावक इन बारह व्रतोंको पालन करता है।

तीसरी सामायिक प्रतिमा।

जिणवयण धम्म चेइय परमेट्ठि जिणालयणं णिच्चंपि।
जं वंदणं तिआलं करेइ सामाइयं तंखु ॥

अर्थ—बाह्य और आभ्यंतर शुद्धिको धारणकर, पूर्व अथवा उत्तर दिशाकी तरफ मुखकर, एकान्त निर्भय स्थानमें, १२ आवर्तको करता हुआ ४ प्रणाम (दिशावर्ती चैत्य चैत्यालय मुनि आदिको) चारों दिशामें करे और स्थिर मन वचन कायसे समता पूर्वक सामायिक करे। सामायिकमें कुत्सित ध्यान और चिंतना छोड देनी चाहिये। जिनदेव, जिनबचन, जिन धर्म, जिनालय और पंच परमेष्टीके गुणोंका चिन्तवन, ध्यान, वंदना स्तुति, आदि त्रिकाल करना सो सामायक है। समतासे राग द्वेष और उसके उत्पादक कारणोंका परित्याग करना सामायिक प्रतिमा है।

उत्तम मज्झ जहण्णं तिविहं पोसहविहाण सुदिट्टं।
सगसत्तीएमासम्मि चउसु पव्वेसु इकायव्वं ॥

अर्थ—प्रोषधोपवास उत्तम मध्यम और जघन्यके भेदसे तीन प्रकार है। उत्तम वह है जिसमें धारणा और पारणाके दिवस एकासन पूर्वक उपवास करना, इसमें समस्त प्रकारके आरंभका त्याग करदेना चाहिये। निर्भय होकर निःशल्यता पूर्वक पंच परमेष्टीका ध्यान धरना चाहिये। मध्यम समस्त हिंसक आरंभको छोड़कर उपवास करनेसे होता है। जघन्य आम्ल अथवा एक अन्नको ग्रहण कर स्वाध्यायादिसे शांति लाभ करता हुआ धर्मसेवन करनेसे होता है। पर्वके दिन प्रोषधोपवास करना चौथी प्रतिमा है।

जंवज्जी जदि हरियं तय पत्त पवाल कंद फल वीयं।
अप्फासुगं च सलिलं सचित्ताणिवित्तिमं ठाणं॥

अर्थ—सचित्त वस्तु—हरित अंकुरपत्र, फल, कंद, बीज और अप्रासुक जलादि सेवन नहीं करना सो पंचम प्रतिमा है।

मण वयण काय कदकारिदाणुमोदेहिं मेहुणंणवधा।
दिवसम्मि जो विवज्जदि गुणम्मि सो सावउ छेदो॥

अर्थ—मन वचन काय और कृतकारित अनुमोदनासे दिवसमें मैथुन सेवन नहीं करना सो छट्ठी प्रतिमा है।

पुव्वुत्तण विवद्दाणंपि मेऊणं सव्वदा विवज्जंतो।
इत्थिकहादि णियत्ती सत्तमया गुण वंभचारी सो॥

अर्थ—नव प्रकारसे स्त्री मात्रका त्याग तथा स्त्री कथादिका भी त्याग करना सो सातमी प्रतिमा है।

जं किं पि गिहारंभं व उथोवं वा सया विवज्जेदि।
आरंभ णिवित्तमदिं सो अट्ठम सावओ भाणिओ॥

अर्थ—थोडा वहुत गृह संबंधी आरंभ छोडना सो आठमी प्रतिमा है।

मुत्तूण वत्थमेत्तं परिग्गह दंडिऊण अवसेसं।
तथवि मुच्छण करेदि जाणिसो सावओ णवमो॥

अर्थ—वस्त्र मात्रको रखकर अवशेष परिग्रहका त्याग करना सो नवमी प्रतिमा है।

पुठोवा पुच्छे वा णिय गेहि परेहि सगिहकज्जे।
अणुमणणं जोणकरेदि वियाण सो सावओ दसमो॥

अर्थ–जो अपने अथवा अन्यके गृहकार्य सबंधी आरंभमें अनुमति नहीं देता है, सो दशमी प्रतिमा धारक है।

एयारसम्मि ठाणे उक्किठो सावओ हवई दुविहो।
वत्थेक धरो पढमो कोवाण परिग्गहो विदिओ॥

अर्थ–उत्कृष्ट श्रावकके क्षुल्लक ऐल्लक ऐसे दो भेद है। प्रथम वस्त्रका रखनेवाला और दूसरा कौपीन मात्र रखनेवाला है।

तव वय नियमावासय लोचं कारेदि पिच्छगिण्हेदि।
अणुवेहा धम्मझाणं करपत्ते एक ठाणम्मि॥

अर्थ–उभय प्रकारके उत्कृष्ट श्रावक तप, व्रत, नियम, संयम ध्यान, और प्रथमकी समस्त प्रतिमाऐं सदाचार नियमसे पालन करता है। निर्दोष आहार एक समय पाणिपात्रमें लेता है। कषायोंका विजयी एकादश प्रतिमा धारक है।

इस प्रकार संक्षेपसे पाक्षिक नैष्ठिक श्रावकका सदाचार है। इस सदाचारके पालन करनेसे उभय लोककी सिद्धि होती है। इतना ही नहीं किन्तु यह सदाचार नीतिमय होनेसे राजभयादि रहित पूर्ण सुखका सत्य मार्ग है।

इच्छमे जो कोइ दिवसिओ अइयारो अणाचारो तस्स भंते पडिक्कमामि पडिक्कमं तस्स मे सम्मतमरणं समाहिमरणं पंडितमरणं वीरियमरणं दुक्खक्खउ कम्मखउ बोहिलाहो सुगइगमण समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

अर्थ–इस प्रकार उक्त व्रतोंमें मुझसे दिवस संबंधी अती-

चार लगे हों उसका प्रतिक्रमण करता हूं। इससे यह भी चाहता हू कि समाधिमरण आदि उत्तम गुण प्राप्त हों।

दंसण वय सामाइय पोसह सचित्त रायभत्तेय।
वंभारंभ परिग्गह अणुमण उद्दिट्ठ देस विरदोय॥

एयासु यथा कहिद पडिमासु पमादाइ कया-इ चार सोहणट्ठं छेदोवट्ठाणं अरहंत सिद्ध आयरीय उवज्झाय सव्वसाहु सक्खियं सम्मत पुव्वगं सु-व्वदं दिढव्वदं समारोहियं मे भवदु मे भवदु मे भवदु।

अथ देवसिय पडिक्कमणाए सव्वाइचार विसो-हिणिमित्तं पुव्वायरियकमेण पडिक्कमण भत्ति कायोत्सग्गं करेमि॥

(णमोक्कार मन्त्रकी जाप्य ९ वार)

इस प्रकार कायोत्सर्ग (णमोक्कार मन्त्रकी जाप्य ९ वार) देकर पुन 'णमो अरहताण, यहासे प्रारंभकर यावंत जिन चैत्यानि' इस श्लोक पर्यन्त मूल पाठ पढ़कर पुन: कायोत्सर्ग धारण करे।

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आयरीयाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं॥

णमोजिणाणं ३ णमो णिसीहीए ३ णमोथुए समममंगलं अरहंत सिद्ध बुद्ध णिरय णिम्मल सममण शुभमण सुसमत्थ समजोगसमभाव सल्लघट्टाणं २ णिब्भय णिराय णिदोस णिम्मोह णिम्मम णिस्संग

णिसल्लमाणमायमोसमूरणे तवपहावण गुणरयण सीलसायर अणंत अप्पमेय महदि महावीर वड्ढमाण बुद्धिरिसिवेदि ।

णमो गुदे ३ ममंगल अरहंताय सिद्धाय बुद्धाय जिणाय केवलिणो ओहिणाणिणो मणपज्जयणाणिणो चउदसपुव्वगामिणो सुदसमिदिसमिद्धाय तवोय वारस विहो तवसी गुणाय गुणवंतोय महारिसि तित्थ तित्थंकराय पवयणं पवयणीयं णाणं णाणीयं दंसणं दंसणीयं संजमो संजदाय विणओ विणीयदृय बंभचेरवासो बंभचारीय गुत्तीओचेव गुत्तिमंतोय मुत्तियोचेव मुत्तिमंतोय समिदीउचेव समिदियंतोय सुसमय परसमय परसमय विदूखंति खवगाय खंतिमंतोय खीणमोहाय खीणवंतोय वोहिय बुद्धाय बुद्धिमंतोय चेयरूक्खाय चेइयाणि उड्ढमहातिरियलोए सिद्धायदणाणि णमसामि सिद्धणिसीहीं याउ अट्ठावय पव्वदे सम्मदे णिज्जंते चंपाएं पावाए मज्झिमाए हत्थिवालियसहाये जाउ अणाउ काउदि सिद्ध णिसिहीयाउ जीवलोयम्मि इसिपब्भ भरतलगयाणं सिद्धाणं बुद्धाणं कम्मचक्क मुक्काणं णीरयाणं णिम्मलाणं गुरु आइरिय उवज्झायाणं पुव्वातित्थेर कुलयराणं चाउवणोय समण संघोय भरहेरावएसु दससु पंचसु महाविदेहेसु जंलोए संति साहुओ संजदा तवसी एदे मम मंगलं पवित्तं एदेहं मंगलं करे

भावदो विशुद्धोसिरसा अहिवंदिऊण सिद्धकाउणं अंजलि मच्छयामि पडिलेहिय अठकत्तारिउ तिविहं तियरयण सुद्धोत्थ ॥

अर्थ–हे जिनराज ! आपके लिये नमस्कार है। स्तुत्य-वंद-नीय, मंगलमय अरहंत भगवान् मेरा मंगल (कल्याण) कीजिये।

हे महावीर ! आपका स्तवन करता हूं। आप राग, दोष, मोह, ममत्व–परिग्रह, शल्य,–(माया मिथ्या निदान) और कषाय रहित हो। आपने साम्यभाव धारणकर समस्त कर्मोंका नाश किया है। शुभ भावोंको धारणकर निर्भय हो गये हो। आपके तप ही प्रधान योग है, इस लिये आप गुण–रत्न हो, शीलके सागर हो, अप्रमेय हो, महान् हो, मुनि महर्षि और ज्ञानीजनोंसे पूज्य लोक शिरोमणि सर्वज्ञ हो। कर्ममल रहित सिद्ध हो (भविष्यमें) शुद्ध हो, अनंतगुणोंके पुंज हो, प्रभो मुझे मंगल करो।

केवली, अरहंत, तीर्थंकर, अवधिज्ञानी, मन.पर्ययज्ञानी, श्रुत-केवली, शास्त्रज्ञानी, पवित्रतप और तपके धारक यतीश्वर, गुणी (ऋद्धिधारी मुनीश्वरको गुणी कहते हैं), गुणवान्, महर्षि, सिद्धा-न्त, सिद्धान्तज्ञानी, ज्ञानी सम्यग्दष्टि, सयमी, विनय करने योग्य, ब्रह्मचारी, गुप्तिधारक, समिति पालक स्वसमयके ज्ञाता, क्षीणमोह ज्ञानी, ऋषि, महर्षि और ऋद्धिधारक, मुनीश्वर मेरा कल्याण करो।

तीन लोकमें जितनी जिन प्रतिमा, जिन चैत्यालय, सिद्धक्षेत्र और तीर्थक्षेत्र है उनको मैं नमस्कार करता हूं। अष्टापद, संमेदाचल, गिरनार, चपापुर, पावापुर, हस्तनापुर आदि तीर्थोंसे और विदेह

क्षेत्र तथा समस्त कर्मभूमिसे जितने जीव कर्ममलरहित सिद्ध, बुद्ध, और निर्मल हो गये हैं वे चारों प्रकारके संघको मंगल करो,

---

नोट—मूल प्रतिक्रमण पाठमें अष्ट मूलगुणोंका पडिक्रमण नहीं लिखा है। पाक्षिक श्रावकके मूलगुणमें अतीचार अनाचार अवश्य ही लगते हैं। अतएव पाक्षिकोंको नीचे लिखा पाठ प्रतिक्रमण करते समय अवश्य ही पढना चाहिये।

(१) हे भगवान्! मैंने मूलगुणोंको पालन करते समय मद्य (दारु)के त्यागमें अचार (अथाणा), चलित दही, छाछ, कांजी और आसवों (अर्क)का सेवन किया कराया और सेवन करने अनुमति दी इस सम्बंधी अतीचार अनाचार जो मुझसे दिवस संबंधी लगा हो उसका मैं प्रतिक्रमण करता हूं।

(२) हे भगवान्! मैंने मूलगुणोंका दुसरा भेद मांस त्याग व्रतमें चाममें रखा हुआ घी, तेल, पानी सेवन किया हो, सडा हुआ अन्न, चलित आटा, आदि पदार्थ हींग (चांममें रखकर आती है।) तथा मांस मिश्रित औषधी सेवन की हो उस संबधी अतीचार अनाचार मुझसे हुआ हो उसका मैं प्रतिक्रमण करता हूं।

(३) हे भगवान्! मैंने मूलगुणोंका तीसरा भेद मधु त्यागमें हरे (लीले) फूल (ऐसे फूल जिनमें मिठासके लिये बहुतसे त्रस जीव आकर निवास करते हों) आदि सेवन किये हों इत्यादि। तत्संबंधी मैं प्रतिक्रमण करता हूं।

(४) हे भगवान्! पंचोदुंबर त्यागमें अज्ञात फल, चलित फल, विना शोधे देखे कच्ची फली, तथा क्षुद्रफल (जिसमें हिंसा

पवित्र करो, शांति करो। विशुद्ध भावनासे मैं अष्टाग (हाथ पैर मस्तक और छाती) नमस्कार करता हूं। मेरे कर्मोंका नाश करो।

अधिक हो और फल अल्प हो जैसे—बेर) आदि सेवन किये हों तत्सम्बधी अतीचार इत्यादि० मै प्रतिक्रमण करता हू।

(५) हे भगवान् ! मैने मूलगुणका पाचवा रात्रिभोजन नामक गुणके पालन करनेमें दो घडो (सूर्योदयास्त) के अनतर पदार्थोंका सेवन किया हों, अथवा औषधि निमित्त बनाकर रसादि सेवन किये हों तत्सबधी अतीचार मुझसे लगा हो उसका मैं प्रतिक्रमण करता हू।

(६) हे भगवन् ! मैंने मूलगुणका छट्टा भेद जल गालन नामक गुणके पालन करनेमें दो मुहूर्त व्यतीत हो जानेपर भी विना छने (गले) पानीका उपयोग किया, जीवाणी (विनछन) जहासे पानी लाया गया वहा पर नहीं पहुंचाया, मलिन और सछिद्र वस्त्रसे जल छाना, जीवाणी (विनछन) का विचार नहीं किया तत्संबंधी अतीचार इत्यादि, उसका मैं प्रतिक्रमण करता हू।

(७) हे भगवान् ! मैंने मूलगुणका सातवा भेद जिनदर्शनके पालन करनेमें प्रमाद किया, अविनयसे कार्य किया, मन, वचन और कायकी शुद्धि नहीं रखी इत्यादि अतीचार अनाचार मुझसे लगे हों उसका मैं प्रतिक्रमण करता हूं।

(८) हे भगवान् ! मैंने मूलगुणका आठवां भेद जीवदयाके पालन करनेमें प्रमाद और अज्ञान रखा, विना प्रयोजन जीवोंको सताया, अंगोपाग छेदे इत्यादि अतीचार मुझसे लगा हो। तत्सबंधी मैं प्रतिक्रमण करता हू।

इस प्रकार सात व्यसनोंमें जो जो दोष लगाये हों उनका भी विचारकर आलोचना पूर्वक प्रतिक्रमण करे।

पडिक्कमामि भंते दंसण पडिमाए संकाए कंखाए विदिगिंछाए परपासंडपसंसणाए पसंथूए जो मए देवसिओ अइचारो अणाचारो मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

हे भगवान्! उन कर्मोंका पश्चात्ताप पूर्वक प्रतिक्रमण करता हू। दर्शन प्रतिमाके पालन करनेमें जिनमार्गमें शंका की हो, शुभाचरण पालनकर संसार सुखकी आकांक्षा (निदान) की हो, धर्मात्माओंके मलिन शरीरको देखकर ग्लानि की हो, मिथ्या मार्ग और उसके सेवनेवालोंकी प्रशंसा की हो, इत्यादि जो मैंने दिवस संबंधी अतीचार मन वचन कायसे किये हों, कराये हों, अन्यके करनेमें अनुमति प्रदान की हो तत्संबंधी समस्त कार्योंकी आलोचना करता हूं, पश्चात्ताप करता हूं और वे कर्म निरर्थक हों, ऐसी इच्छा करता हू।

पडिक्कमामि भंते वद पडिमाए पढमे थूलयडे हिंसाविरदिवदे वहेण वा बंधेण वा, छेएण वा अइभारारोपणेण वा, अणपाणणिरोहेण वा जो मए देवसिउ अइचारो अणाचारो मणसा, वचिया, काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छामि दुक्कडं॥

अर्थ-हे भगवान्! मैं अपने कृतकर्मोंकी आलोचना पूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हू। दूसरी व्रत प्रतिमाके अंतर्गत प्रथम अहिंसाणुव्रतके पालन करनेमें जीवोंको बांधे हों, मारे हों, अंगोपांग छेदे हों, शक्तिसे अधिक बोझ लादा हो और अन्न पानका निरोध किया हो, इत्यादि अनेक अतीचार अनाचार दिवस संबधी मुझसे मन, वचन, काय और कृत, कारित, अनुमोदनसे लगे हों वे निरर्थक हों, ऐसी मेरी भावना है।

पडिक्कमामि भंते वद पडिमाए विदिये थूलयडे असच्चाविरदिवदे मिच्छोपदेसेण वा रहो अब्भक्खाणेण वा कूडलेह करणेण वा णासावहारेण वा सायार-मंतभेएण वा जो मए देवसिउ अइचारो अणाचारो मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छामि दुक्कड॥

हे भगवान्! अपने कृत कर्मोंकी आलोचना पूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूं। दूसरी प्रतिमाके अंतर्गत स्थूल सत्यव्रतमें मिथ्या उपदेश देनेसे, एकांतमें कही हुई बातको प्रकट कर देनेसे, झूठा लेख लिखनेसे, धरोहर हरण करनेसे, किसीके इंगित चेष्टासे अभिप्राय समझकर भेद प्रकट कर देनेसे इत्यादि अनेक प्रकार अतीचार अनाचार मन, वचन, काय और कृत, कारित, अनुमोदनासे हुये हों वे निरर्थक हों।

पडिक्कमामि भंते वद पडिमाए तिदिये थूलयडे थेणाविरदिवदे थेणपओगेण वा, थेणहरियादाणेण

वा, विरूद्धरज्जाइक्कमणेण वा, हीणाहियम्माणुमाणेण वा पडिरूवय ववहारेण वा जो मए देवासिउ अइचारो अणाचारो मणसा वचिया कायेण कदो वा कारिदो वा कीरतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छामि दुक्कड ॥

अर्थ–हे भगवन् ! मै अपने कृत कर्मोंकी आलोचना पूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हू। दूसरी प्रतिमाके अतर्गत स्थूल अचौर्याणुव्रतके पालन करनेमें दिवस सवन्धी मन, वचन, काय, और कृत, कारित, अनुमोदनासे चोरीका प्रयोग वतलाया हो (स्वयं तो चोरी न की हो परंतु दूसरोंको ऐसा व्यापार वतलाना जिससे वह चोरी करे) चोरसे अपहरण की हुई द्रव्य ग्रहण की हो, राज्यके विरुद्ध कार्य किया हो (वस्तुओंका कर चुराया हो,रेलकी टिकिट आदिमें चोरी की हो,राजाकी आज्ञा भग की हो) तोलनेके वांट कमती बढती राखे हों, और अधिक कीमती वस्तुमें अल्प कीमती मिलाकर वदले दी हों, इस प्रकार अनेक दोष किये हों वे सव निरर्थक हों ।

पडिक्कमामि भते वद पडिमाए चउथे थूलपडे अवंभविरादिवदे पराविवाहकरणेण वा इत्तरियागमणेण वा परिग्गहिदा परिग्गाहिदागमणेण वा अणंगकीडणेण वा कामात्तिव्वाभिणिवेसेण वा जो मए देवासिउ अइचारो अणाचारो मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो कीरंतो वा समणुमणिंदो तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥

अर्थ—हे भगवान्! मैं अपने व्रतोंमें लगे हुए दोषोंकी आलोचना पूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूं। दूसरी व्रत प्रतिमाके अंतर्गत स्थूल ब्रह्मचर्याणुव्रतके पालन करनेमें दिवस संबंधी मन, वचन, काय और कृत, कारित, अनुमोदनासे अन्यके पुत्र पुत्रियोंका विवाह (कन्यादानके करनेमें महान् धर्म होता है ऐसा अन्य धर्मवाले मानते हैं) किया हो, व्यभिचारिणी स्त्रीके घरके साथ व्यवहार आना जाना आदि रखा हो, वेश्या कुमारिका और विधवा इत्यादिक परिग्रहीत और अपरिग्रहीत स्त्रियोंके साथ कामवासनासे व्यवहार (बोलना हसना आदि) किया हो, काम सेवनके अंग सिवाय अन्य अंगसे काम चेष्टा की हो, कामके तीव्र विकारसे विभत्स विचारा हो इत्यादि अनेक प्रकारके दोष दिवस संबंधी मुझसे बने हों, दूसरेसे कराये हों, अन्यके करनेमें हां भरा हो सो सब मिथ्या हो।

पडिक्कमामि भंते वद पडिमाए पंचमे थूलयडे परिग्गहपरिमाणवदे खेत्तवत्थूण परिमाणाइक्कमणेण वा धणधण्णाणं परिमाणाइक्कमणेण वा हिरण्णसुवण्णाण परिमाणाइक्कमणेण वा दासीदासाण परिमाणाइक्कमणेण कुप्पपरिमाणाइक्कमणेण वा जो मए देवसिओ अइचारो मणसा वच्चिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥

अर्थ—हे भगवान्! मैं अपने व्रतोंमें लगे हुए दोषोंको आलोचना पूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूं। दू-

सरी प्रतिमाके अतर्गत स्थूल परिग्रह त्यागव्रतमें जमीन (क्षेत्र) घर, गाय बैल प्रभृति धन और गेहू आदि धान्य, सुवर्ण, चादी, दासी, दास, वस्त्र, और भांड (वर्तनादि) इत्यादि समस्त परिग्रहके परिमाणका मैने मन वचनकाय और कृतकारित अनुमोदनासे उल्लंघन किया हो, अन्यसे कराया हों, अन्यके करनेमें अनुमति दी हो तो, उस संबंधी समस्त दोष मिथ्या हों।

पडिक्कमामि भंते वदपडिमाए पढमे गुणव्वदे उड्ढवईक्कमणेण वा अहोवईक्कमणेण वा, तिरियवईक्कमणेण वा खेत्तवड्ढिएण वा सदि अंतराधाणेण वा जो मए देवसिउ अइचारो मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छामि दुक्कड ॥

अर्थ—हे भगवान् ! मैं अपने व्रतोंमें लगे हुए दोषोंकी आलोचना पूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हू। मैंने व्रत प्रतिमाके अतर्गत गुणव्रतका प्रथम भेद दिग्व्रत नामक व्रतके पालन करनेमें ऊर्ध्व दिशाका अतिक्रमण किया हो, नीचेकी दिशाका अतिक्रमण किया हो, तिर्यग्दिशाका अतिक्रमण किया हो, क्षेत्रकी मर्यादा बढाई हो, अथवा मर्यादाका विस्मरण किया हो, इत्यादि अनेक प्रकारके दोष दिवस सबधी मैंने किये हों, और अन्यके करनेमें अनुमति दी हो तो वे सब मिथ्या हों।

पडिक्कमामि भंते वद पडिमाए विदिए गुणव्वदे आणयाणेण वा विणिजोगेण वा सद्दाणुवाएण वा रूवाणुवाएण वा पुग्गलखेवेण वा जो मए देवसिउ

अइचारो मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥

अर्थ—हे भगवन् ! मैं अपने व्रतमें लगे हुए दोषोंकी आलोचना पूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूं। दूसरी प्रतिमा के अंतगर्त गुणव्रतका दूसराभेद देशव्रतके पालन करनेमें, मर्यादा किये हुए क्षेत्रके वाहरसे वस्तु मगाई (किसी प्रयोजनसे कहींपर गमन होता है मर्यादाके वाहर यदि किसी वस्तुको लानेका हमारा अभिप्राय है और वह वस्तु स्वय न जाकर अन्यसे मगवाई तो मर्यादाके वाहर जानेका प्रयोजन सिद्ध हुआ परंतु प्रत्यक्ष व्रत भंगके भयसे स्वयं गमन नहीं किया इस लिये यह भगाभंग वृत्तिरूप अतिचार है।) हो। मर्यादाके वाहर वस्तु भेजी हो, ककर पत्थर फेंककर अन्य मनुष्यसे मर्यादाके वाहरका कार्य किया हो, शब्द आदिकी समस्या दिखलाकर कार्य किया हो, अपना रूप दिखलाकर मर्यादा वाह्यका कार्य सिद्ध किया हो, इत्यादि अनेक दोप मन, वचन, कायसे दिवसमें मैंने किये हों, अन्यसे कराये हों अथवा अन्यके करनेमें अनुमति प्रदान की हो तो वे सब मिथ्या हों।

पडिक्कमामि भंते वदपडिमाए तिदिए गुणव्वदे कंदप्पेण वा कुक्कुचिएण मोक्खरिएण वा असमक्खियाहिकरणेण वा भोगोपभोगाणत्थकेण जो मए देवसिउ अइचारो मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥

अर्थ—हे भगवन्! मैं अपने व्रतोंमें लगे हुए दोषोंकी आलोचना पूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूं। दूसरी व्रत प्रतिमाके अंतर्गत गुणव्रतका तीसरा भेद अनर्थदण्डविरति व्रतमें रागके उदयसे स्मित हास्यसे थट्टा की हो, कुत्सित भाषण किया हो, शरीरकी खोटी चेष्टा की हो, विना प्रयोजन बकवाद किया हो, व्यर्थके कार्य किये हो (प्रयोजन विना हिंसा जनक व्यापार किया हो) भोगोपभोगकी सामग्री अपेक्षासे बहुत ही अधिक निष्काम संग्रह की हो। इत्यादि अनेक प्रकारके दोष मन वचन कायसे दिवसमें मैंने किये हों, अन्यसे कराये हों अथवा किसीके करनेपर हर्ष प्रदर्शित किया हो तो वे सब दोष मिथ्या हो।

पडिक्कमामि भंते वदपडिमाए पढमे सिक्खावदे फासिंदिय भोगपरिमाणाइक्कमणेण वा रसणिंदिय भोगपरिमाणाइक्कमणेण वा घाणिंदिय भोगपरिमाणाइक्कमणेण वा चक्खिंदिय भोगपरिमाणाइक्कमणेण वा सवणिंदिय भोगपरिमाणाइक्कमणेण वा जो मए देवसिओ अइचारो मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥

अर्थ—हे भगवान्! मैं अपने व्रतोंमें लगे हुए दोषोंकी आलोचना पूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूं। व्रत प्रतिमाके अंतार्गत प्रथम शिक्षाव्रत भोगपरिमाण व्रतमें स्पर्श इंद्रिय, (चर्म—इसका गर्म, शीत, हलका, भारी, रूक्ष, स्निग्ध, कोमल, कठिन)विषय है और इस विषय संबंधी भोग—(जो एकबार

भोगनेमें आवे ऐसे पदार्थोंके परिमाणमें) रसना इंद्रिय (जीभ—इसका मिष्ट, कटु, तिक्त, कषायला और खट्टा विषय है इस विषय संबंधी भोग पदार्थोंके परिमाणमें) घ्राणेन्द्रिय (नाक—इसका विषय सुगंध तथा दुर्गंध इस विषय संबंधी भोग पदार्थोंके परिमाण) चक्षुरिन्द्रिय (आंख—इसका काला, पीला, लाल, सफेद हरित पदार्थ, इस विषय संबंधी भोग पदार्थोंके परिमाण) श्रोत्रेन्द्रिय (कान—इसका विषय अवाजका ज्ञान इस विषय संबंधी भोग पदार्थोंके परिमाण) इस प्रकार पांच इन्द्रियोंके विषय संबंधी भोग पदार्थोंके परिमाणका अतिक्रमण मन वचन काय द्वारा दिवसमें स्वय किया हो अन्यसे कराया हो, किसीके करनेमें भला माना हो इत्यादि दोष मैंने किये हों तो वे सब मिथ्या हों।

पडिक्कमामि भंते वदपडिमाए विदियसिक्खावदे फासिंदिय परिभोगपरिमाणाइक्कमणेण वा रसणिंदिय परिभोगपरिमाणाइक्कमणेण वा घाणिंदिय परिभोगपरिमाणाइक्कमणेण वा चक्खिंदिय परिभोगपरिमाणाइक्कमणेण वा सवणिंदिय परिभोगपरिमाणाइक्कमणेण जो मए देवसिउ अइचारो मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥

अर्थ—हे भगवान ! मैं अपने व्रतोंमे लगे हुए दोषोंको आलोचना पूर्वक प्रतिक्रमण करता हूं। व्रत प्रतिमाके अंतर्गत शिक्षाव्रतका तीसरा भेद उपभोग (जो वार २ भोगनेमें आवे) परिमाण व्रतमें स्पर्शेन्द्रिय उपभोग परिमाण, रसनेन्द्रिय उपभोग

परिमाण, घ्राणेन्द्रिय उपभोग परिमाण, चक्षुरिन्द्रिय उपभोग परिमाण और श्रोत्रेन्द्रिय उपभोग परिमाण इस प्रकार पांचोंइन्द्रियोंके उपभोग संबंधी पदार्थोंका अतिक्रमण मन वच कायसे किया हो, कराया हो, करनेको भला माना हो इत्यादि अनेक दोष दिवसमें मुझसे बने हों तो वे सब मिथ्या हों।

पडिक्कमामि भंते वदपडिमाए तिदिए सिक्खावदे सचित्तणिक्खेवेण वा सचित्तपिहाणेण वा परउवएसेण वा कालाइक्कमणेण वा मच्छरिएण वा जो मए देवसिउ अइचारो मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छामि दुक्कडं॥

अर्थ—हे भगवान्! मैं अपने लगे हुए दोषोंकी आलोचना पूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूं। व्रत प्रतिमाके अंतर्गत शिक्षाव्रतका तीसरा भेद अतिथिसंविभाग नामक व्रतमें सचित्त—(जीवयोनि जीवोत्पत्ति होनेका स्थान) वस्तुमें प्रासुक अचित्त पदार्थको रखा हो, सचित्त वस्तुसे ढका हो, अन्य किसी प्रतिपादित करनेसे दिया अथवा अन्यका द्रव्य अपना द्रव्य कहकर दिया हो, दान देनेमें समयका विच्छेद (लोभ और कलुषित परिणामोंके कारण यह भावना करी हो कि यह समय व्यापारादिका है इस लिये कौन इस समय आहारादि दान देने जाता है।) किया हो; दान देनेमें अन्य भव्यात्माओंके साथ द्वेष (प्रतिष्ठादिके कारण अर्थात् जो अन्य कोई धर्मात्मा दान करे तो उसके साथ यह विचार कर द्वेष करे कि इसकी प्रतिष्ठा सर्वत्र होगी

और बडा अमीर होकर चुप रह गया इस लिये मेरी निंदा होगी इस लिये द्वेष) किया हो इत्यादि अनेक प्रकारके दोष, मन, वचन, कायसे दिवसमें मैंने स्वय किये हो, अन्यसे कराये हों, किसी करनेमें संमत्ति प्रदान की हो तो वे सब दोष निरर्थक हों।

पडिक्कमामि भंते वदपाडिमाए चउत्थे सिक्खावदे जीविदासंसणेण वा मरणासंसणेण वा मित्ताणुराएण वा सुहाणुबंधेण वा णिदाणेण वा जो मए देवसिउ अइचारो मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥

अर्थ—हे भगवन्! मैं अपने व्रतमें लगे हुए दोषोंकी आलोचना पूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूं। व्रत प्रतिमाके अंतर्गत शिक्षाव्रतका चोथा भेद समाधिमरण व्रत पालन करनेमे जीवित रहनेकी (मै अभी अधिक जीवित रहा तो अच्छा है? अथवा जीनेकी आशासे समाधिमरणमें शिथिलता करना) आशा रखना, मरणका भय करना, हाय! मै मरजाऊंगा क्या? ऐसे परिणामोंसे सक्लेशित होना अथवा शीघ्रतासे मरण होनेकी इच्छा रखना। इष्ट मित्रजनोंसे प्रेम (राग) करना, पूर्वमें भोगे हुए भोगोंका स्मरण करना, और व्रतादिक पालन कर संसारिक सुखकी इच्छा करना इत्यादिक अनेक दोष दिवसमें मैने मन वचन कायसे किये हों, अन्यसे कराये हो, किसीके करनेमें अनुमति प्रदान की हो, तो वे सब दोष निरर्थक हो।

पडिक्कमामि भंते सामाइयपडिमाए मणदुप्पणिधाणेण वा वाकदुप्पणिधाणेण वा, कायदुप्पणिधाणेण वा अणादरेण वा सदिअणुवट्ठाणेण वा जो मए देवसिउ अइचारो, मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥

अर्थ–हे भगवान्! मैं अपने व्रतोंमें लगे हुए दोषोंकी आलोचना पूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करनेका इच्छुक हूं। तीसरी सामायिक प्रतिमाके पालन करनेमें मनकी स्थिरता न रखी (आर्त और रौद्रध्यान पूर्वक मनको अन्य प्रकार चलायमान किया) वचनकी स्थिरता (सामायिक पाठका शुद्ध उच्चारण न कर बकवाद आदि करनेसे वचनकी दुष्टता धारण की) न रखी, शरीरकी स्थिरता (एक आसनसे स्वस्थता पूर्वक निर्विकार सामायिक नहीं किया किन्तु शरीरकी दुष्टतासे अंगोपांगको इधर उधर चलायमान किया) नहीं रखी, सामायिक करनेमें अनादर प्रकट किया अथवा सामायिकके पाठका विस्मरण किया इत्यादि अनेक प्रकारके दोष दिवसमें मैने मन वचन कायसे किये हों, अन्यसे कराये हों, किसी अन्यके करनेमें अनुमति प्रदान की हो तो वे सब दोष मिथ्या हों।

पडिक्कमामि भंते पोसहपडिमाए अप्पडिवेक्खियापमज्जियोसग्गेण वा अप्पडिवेक्खियापमज्जियादाणेण वा अप्पडिवेक्खियापमज्जियासंथारोवक्कमणेण वा आवस्सयाणदरेण वा सदिअणुवट्ठाणेण

वा जो मए देवसिउ अइचारो मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥

अर्थ–हे भगवान्! अपने व्रतोंमें लगे हुए दोषोंकी आलोचना पूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूं। चौथी प्रोषधोपवास नामक प्रतिमाके पालन करनेमें दृष्टिसे जीवजंतुओंको न देखकर और प्रमादसे जीवजंतुओंका शोधन किये विना मल मूत्रका क्षेपन किया हो अथवा पूजापकरण आदि वस्तुओंको विना देखे विना शोधे ऐसे ही जीव जंतुवाली जमीनमें रखी हों। विना देखे और विना सोधे उपकरण पुस्तक आदि संयमोपयोगी वस्तुओंको ग्रहण किया हो, विना देखे विना शोधे विस्तर (पथारी) आदि विछाये हों, षट्[1] आवश्यक पालन करनेमें अनादर किया हो, अथवा सामायिक, पूजन, स्तवन आदिका पाठ विस्मरण किया हो इत्यादि अनेक दोष दिवसमें मैंने मन वचन कायसे स्वयं किये हों, अन्यसे कराये हों, अन्य किसीके करनेमें अनुमति प्रदान की हो तो वे सब दोष मिथ्या हों।

---

१ गृहस्थोंके लिये षट आवश्यक दोनों प्रकारके पालन करने चाहिये। समता, वन्दना, स्तुति, प्रतिक्रमण, स्वाध्याय, और कायोत्सर्ग इनको आवश्यक कहते हैं। अथवा देवपूजा, गुरुकी उपासना स्वाध्याय, संयम, तप, और दान ये भी छह आवश्यक हैं। दोनों प्रकारके आवश्यकोंका अभिप्राय परिणामको सरल और पवित्र रखनेका है इसलिये आवश्यक कर्ममें अनादर करना व्रतमें शिथिलता है।

पडिक्कमामि भंते सचित्तविरदि पडिमाए पुढविकाइआ जीवा संखेज्जासंखेज्जा आउकाइआ जीवा संखेज्जासंखेज्जा तेउकाइआ जीवा संखेज्जासंखेज्जा वाउ काइआ जीवा संखेज्जा संखेज्जा वणप्फदिकाइआ जीवा अणंताणंता हरिया बिया अंकुरा छिण्णाभिण्णा एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥

अर्थ—हे भगवान् ! मैं अपने व्रतोंमें लगे हुए दोषोंकी आलोचना पूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करनेका इच्छुक हूं। पांचवी सचित्तत्याग प्रतिमाके पालन करनेमें जलकायके संख्यात अथवा असंख्यात जीव, तेजकायके संख्यात असंख्यात जीव, वाउकायके संख्यात असंख्यातजीव, पृथ्वीकायके संख्यात असंख्यातजीव, और वनस्पतिकायके अनंतानंत जीव, हरितकायके जीव, हरित अंकुर, बीज कदमूल आदिके जीव, और साधारण वनस्पतिके जीवोंका छेदन किया हो, भेदन किया हो, प्राणोंका घात किया हो, पांव (पग) आदिसे कुचल दिये हों, त्रास दिया हो, पीडा करी हो, और उनकी विराधना की हो इत्यादि अनेक दोष मैंने मन वचन कायसे स्वयं किये हों, अन्यसे कराये हों, किसी अन्यके करनेमें सहमत हुआ हुआ हों तो वे सब दोष मिथ्या हों ।

पडिक्कमामि भंते राइभत्तपडिमाए णव विहबंभचरियस्स दिवा जो मए देवसिउ अइचारो

मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥

अर्थ—हे भगवान् ! मैं अपने व्रतोंमें लगे हुए दोषोंकी आलोचना पूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करनेकी इच्छा करता हू । षष्ठी दिवा—मैथुन त्याग नामक प्रतिमाके पालन करनेमें नव प्रकार—स्त्रियोंके विषयकी अभिलाषा, लिग विकार, घृत दुग्धादि पुष्टरस त्याग, स्त्री—पशु—नपुसक—विट, और सप्त विषयोंके लोलुप मनुष्योंके आश्रित वस्तिका त्याग, स्त्रियोंके मनोहर अग निरीक्षण त्याग, स्त्रियोंका बुरी वासना आदर सत्कारका त्याग, अपनी पूजा प्रतिष्ठाके श्रवणका त्याग, अग शृंगारकात्याग, संगीत नृत्य वादित्र आदिका श्रवण किया हो इत्यादि अनेक दोष दिवसमें मैंने मन वचन कायसे स्वय किये हों, अन्यसे कराये हों, किसी अन्यके करनेमें भला माना हो तो वे सब दोष मिथ्या[1] हों।

पडिक्कमामि भंते इत्थिकहायत्तणेण वा इत्थि-मणोहरांग निरिक्खिणेण वा पुव्वरयाणुस्मरणेण वा मुक्कोपणरसा सेवणेण वा सरीरमंडणेण वा जो मए देवासिउ अइचारो मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥

---

१ इस प्रतिमाका नाम रात्रिभुक्त त्याग भी है इसलिये चारों प्रकारके आहारमें मोह किया हो, पूर्व भोग हुए रसोंका स्मरण किया हो, निदान किया हो, और रसोंको न भोगते हुए भी मैं रसभोग रहा हू ऐसा स्मरण किया हो इत्यादि दोष मैंने स्वय किया हो अन्यसे कराये हो, किसीके करनेपर समति दी हो तो वे सब मिथ्या हो।

अर्थ-हे भगवान्! मैं अपने व्रतोंमें लगे हुए दोषोंकी आलोचना पूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूं। सातवीं ब्रह्मचर्य प्रतिमाके पालन करनेमें स्त्रियोंकी मनोहर कामोत्पादक कथा की हो, काम दृष्टिसे स्त्रियोंके गुह्य मनोहर अंगोंका निरीक्षण किया हो, पूर्वकालमें भोगे हुए विषयोंका स्मरण कर मनको विकारित किया हो, कामोत्पादक पुष्ट रसोंका सेवन किया हो, स्त्रियोको आसक्त करनेवाला शरीरका शृंगार किया हो इत्यादि अनेक प्रकारका दोष मैंने दिवसमें मन, वचन, कायसे किया हो, अन्यसे कराया हो, किसी अन्यके करनेमें सहमति प्रदान की हो तो वे सब दोष मिथ्या हों।

पडिक्कमामि भंते आरंभविरदि पडिमाए कसायवसंगएण जो मए देवसिउ आरंभो मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥

अर्थ-हे भगवान्। मैं अपने व्रतोंमें लगे हुए दोषोंकी आलोचना पूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हू। आठमी आरंभत्याग प्रतिमाके पालन करनेमे क्रोध, मान, माया, लोभ और मोह आदि कषायोंके वश पापकर्मोंका आरभ दिवसमें मैंने मन, वचन, कायसे किया हो, अन्यसे कराया हो, अन्य किसीके करनेमें अनुमति प्रदान की हो तो वे सब दोष मेरे मिथ्या हों।

पडिक्कमामि भंते परिग्गहाविरदिपाडिमाए वत्थमेत्त परिग्गहादो अवरम्मि परिग्गहे मुच्छाप-

रिणामो जो मए देवसिउ अइचारो मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥

अर्थ—हे भगवान्! मै अपने व्रतोंमें लगे हुए दोषोंकी आलोचना पूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हू। नवमीं परिग्रह त्याग प्रतिमाके पालन करनेमें वस्त्र मात्र परिग्रह सिवाय अन्य परिग्रहमें मूर्च्छा की हो तो उस सम्बंधी दिवसमे मन, वचन, काय और कृत, कारित, अनुमोदनासे किये हुए दोषोंको मिथ्या चाहता हू।

पडिक्कमामि भंते अणुमणविरदिपडिमाए जंकिंपि अणुमणणं पुट्ठापुट्ठेण कदं वा कारिदं वा कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥

अर्थ—हे भगवान्! मैं अपने व्रतोंमें लगे हुए दोषोंकी आलोचना पूर्वक प्रतिक्रमण करता हू। दशमी अनुमति विरति प्रतिमाके पालन करनेमे अन्यके पूछनेपर अथवा विना पूछनेपर भी जो कुछ अनुमति दी हो तत्सम्बंधी मन, वचन, काय और कृत, कारित, अनुमोदनासे दिवसमें किये हुए समस्त दोष मिथ्या हों।

पडिक्कमामि भंते उद्दिट्ठविरदिपडिमाए उद्दिट्ठदोसबहुलं आहारियं वा आहारावियं वा आहारिज्जंतं समणुमणिदो तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

अर्थ—हे भगवान्! मैं अपने व्रतोंमें लगे हुए दोषोंकी आलोचना पूर्वक पश्चात्ताप करता हुआ प्रतिक्रमण करता हूं।

ग्यारहवीं उद्दिष्ट त्याग प्रतिमाके पालन करनेमें उद्दिष्ट दोपसे दूषित आहार स्वयं सेवन किया हो, अन्यको उद्दिष्ट दोप सहित आहार कराया हो, उद्दिष्ट दोष दूपित आहारके करनेमें समति प्रदान की हो, तत् सबधी जो दोप मन वचन कायसे मुझसे हुए हों वे सब मिथ्या हों।

निर्ग्रन्थ पदकी वांछा।

इच्छामि भंते इमं णिग्गंथं पावयणं अणुत्तरं केवलियं णेग्गइयं सामाइयं संसुद्धं सल्लघत्ताणं सिद्धिमग्गं सेढिमग्ग खंतिमग्गं मोत्तिमग्गं मोक्खमग्गं पमोक्खमग्गं णिज्जाणमग्गं णिव्वाणमग्गं सव्वदुःखपरिहाणिमग्गं सुचरियपरिणिव्वाणमग्गं अविहत्तमविसंति पव्वयणमुत्तमं तं सद्दहामि तं पत्तियामि तं रोचेमि तं फासेमि इदो उत्तरं अण्णं णच्छि ण भूदं ण भव भविस्सदि णाणेण वा दंसणेण वा चरित्तेण वा सुत्तेण वा इदो जीवा सिज्झंति मुचंति परिणिव्वाणयंति सव्वदुःखाणमंतं करति परिवियाणंति समणोमि संजदोमि उवरदोमि उवसंतोमि उवधिणि पडिमाणमायामोसमृरण मिच्छणाण मिच्छदंसण मिच्छरितं च पडिविरदोमि सम्मणणाण सम्मद्दसण सम्मचरित्तं च रोचेमि जं जिणवरेहिं पणत्तो इत्थ मे जो कोई देवासिउ राईउ अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥

अर्थ-हे भगवान् ! मैं निर्ग्रन्थ पदकी इच्छा करता हूं। जबतक मेरा संसारसे संबंध है तब तक भव भव यह त्रिजगत्-पूज्य और मंगल लोकोत्तम शरणभूत निर्ग्रन्थपद (समस्त परिग्र-हादि रहित परम दिगंबर अवस्था) वार वार मिलो।

बाह्य और आभ्यंतर समस्त परिग्रह रहित, अनुत्तर-(मोक्ष-मार्गका साक्षात् चिन्ह निर्ग्रन्थ लिंग सिवाय अन्य किसी भी लिंगसे मोक्षकी प्राप्ति नहीं होती है इस लिये निर्ग्रंथपद लोकोत्तर है) केवल ज्ञानका उत्पादक, रत्नत्रयका बीज, सर्व सावद्य रहित, परम उदासीनताका कारणभूत, आलोचना-प्रायश्चित्त-निरतीचारता प्रतिक्रमण आदि गुणोंसे परम विशुद्ध, माया मिथ्या निदान इस प्रकार शल्यत्रय रहित, आत्म सिद्धिका प्रधान मार्ग, उपशमक्षयो-पशमादि श्रेणियोंका साक्षात् मार्ग, परिग्रह क्रोध मान माया लोभ काम और व्यामोहादि समस्त विकार रहित होनेसे सर्वोत्तम निर्भय परमात्म प्राप्तिका प्रत्यक्ष मार्ग, त्यागका मार्ग, मोक्षमार्ग, उत्कृष्ट-पदका मार्ग, संसारके परिभ्रमणसे रहित निर्दोष मार्ग, निर्वाणका मार्ग, सर्वदुःखोंके नाश करनेका मार्ग, उत्तम सदाचारके उत्पन्न करनेका मार्ग, अबाधित मार्ग, स्वतन्त्रताका मार्ग, निर्भयताका मार्ग, सर्व सुखोंका मार्ग और सर्वोत्कृष्ट मार्ग ऐसा निर्ग्रन्थ पद है।

मैं उक्त सर्वोत्कृष्ट निर्ग्रन्थपदको विशुद्धभावोंसे श्रद्धान करता हूं, और संशयादि समस्त विकार रहित शुद्ध निश्चयसे चाहता हूं, विशुद्ध भावोंसे निश्चयरूप मानता हूं, विश्वास करता हूं सहृदयसे स्वीकार करता हूं. अनन्य भावनासे प्रेम

करता हूं, भक्तिभावसे स्पर्श करता हू, पवित्र भावोंसे धारण करना चाहता हू। इस निर्ग्रन्थपद सिवाय और दूसरा कोई भी उत्तम नहीं है। प्रथम कोई नहीं था, और न भविष्यमें कोई इसके समान होगा। सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन, सम्यक्चारित्र, और सम्यक् आगमसे यह निर्ग्रंथपद सर्वोत्कृष्ट है, इसके धारण करनेसे ही जीव मोक्षमार्गमे प्राप्त होंगें। सिद्धपदको प्राप्त होगें। समस्त कर्म रहित सर्वथा मुक्त होगें अर्थात् फिर कभी संसारके बंधनमें नहीं प्राप्त होगें। इसी निर्ग्रंथपदसे निर्वाणपदको प्राप्त होगें सर्व दुःखोका नाश करेगे। समस्त जीवादि तत्वोंके ज्ञाता होगें। इस लिये मै इस महान् परमपूज्य निर्ग्रंथ पदको धारण करता हू। और उसकी प्राप्तिके लिये संयमका आराधन करता हू। विषय कषायोंसे उपशात होता हू, विरक्त होता हूं। परिग्रह क्रोध, मान, माया, लोभ, मात्सर्य, द्वेष, राग, काम, भय, प्रपच, और समस्त व्यामोहको छोडता हू। हिंसा, झूठ, चौरी, कुशील और परिग्रहका त्याग करता हूं। मिथ्याज्ञान, मिथ्यादर्शन, मिथ्याचारित्रसे सर्वथा विरक्त होगया हू। अब मै सदाके लिये इनका परित्याग करता हूं। और सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्रका श्रद्धान करता हू। जो जिनेन्द्र भगवानने कहा है वह सत्य है, प्रमाणित है, निश्चय है, अबाधित है। उसका मै विश्वास करता हू, श्रद्धान करता हूं। इस विषयमें मुझसे जो कुछ अतीचार अनाचार हुए हों तो वे सब मिथ्या हों।

इच्छामि भंते वीरभत्ति काउस्सग्गं करेमि जो

मए देवसिउ[1] (राईउ चउमासिउ सांवच्छरिउ) अइचारो अणाचारो आभोगो अणाभोगो काईउ वाईउ माणसिउ दुच्चरिउ दुच्चारिउ दुब्भासिउ दुप्परिणामिउ दुस्समिणिउ णाणे दंसणे चरित्ते सुत्ते समाइए एयारस एहं पडिमाणं विराहणाए अट्ठविहस्स कम्मस्स णिग्घादणाए अणहा उस्सासिदेण वा णिस्सासिदेण वा उम्मिस्सिदेण वा णिमिसिदेण वा खासिदेण वा छिंकिदेण वा जंभाईदेण वा सुहुमेहिं अंगचलाचलेहिं दिट्ठिचलाचलेहिं एदेहिं सव्वेहिं समाहिं पत्तेहि आयारेहिं जाव अरहंताणं भयवंताणं पज्जवासं करेमि तावकायं पावकम्म दुच्चरियं वोस्सरामि।

दंसण वय सामाइय पोसह सच्चित्त राय भत्तीय। बंभारंभ परिग्गह अणुमणमुद्दिट्ठ देसविरदेदे।

एयासु यथा कहिद पडिमासु देवासिओ पमादाइकया इच्चार सोहणट्ठ छेदोवट्ठावण होउ मज्झं।

अरहंत सिद्ध आयरिय उवज्झाय सव्वसाहु सक्खियं सम्मत्त पुव्वग दिढव्वद समारोहियं मे भवदु मे भवदु, मे भवदु। देवसिय पडिक्कमणाए सव्वाइचार विसोहिणिमित्तं पुव्वापरियकम्मेण निट्ठितकरण वीरभत्तिकायोस्सग्गं करेमि।

---

1 देवसिउ ३६ राउ १८ और चउमासिउ सांवच्छरिओ १०८ बार णमोकार मंत्र पढ़कर जाप दे।

"णमो अरहंताणं" यहांसे प्रारंभकर "यावंति जिन चैत्यानि" इस श्लोकपर्यन्त पढ़कर पुनः नववार णमोकार मन्त्रकी जाप्य देना चाहिये।

हे भगवान्! मैं वीरप्रभुकी भक्ति करनेका इच्छुक हूं। और इसके लिये मैं इस विनाशीक शरीरसे ममत्वभाव छोड़ता हू। दिवसमें (रात्रिमें इत्यादि) आवश्यक क्रियाओंकि करते हुए मैंने आलस किया हो, व्रतादिकोंको भंग किया हो, उनमें अतिचार लगाये, शिथिलता धारण की हो, मनमें ग्लानि उत्पन्न की हो, प्रकटरूप दंभवृत्तिसे व्रत पालन किये हों, लज्जाके लिये एकदम अपनेको छुपाकर आचरण किये हों, मन, वचन और शरीरकी दुष्टतासे व्रतोंका पालन किया हो, विभत्स उच्चारण कर कार्य किया हो, राग, द्वेष, अज्ञान और प्रमादसे विनय रहित उद्दण्डतासे व्रतोंका पालन किया हो, अपशब्द कहकर महत्त्वता बतलाई हो, कुत्सित परिणामों (बुरे भावों)से कार्य किया हो, बुरे स्वप्नमें दोष उत्पादन किया हो, सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र और जिनागमकी विराधना की हो, प्रतिमाओंकी विराधना की हो, इत्यादि अनेक दोष मुझसे बने हों, वे सब मिथ्या हो।

आठ कर्मोंको नाश करनेवाली क्रियाओंकि प्रयत्न करनेमें (सामायिक-प्रतिक्रमण-ध्यान-तप-पूजा और स्वाध्याय ये सब

---

१ जैसा प्रतिक्रमण किया हो वैसी ही णमोकार मंत्रकी जाप देनी चाहिए अर्थात् दिवस संबंधी प्रतिक्रमणकी ३६ बार णमोकारकी जाप देना इसी प्रकार उक्त लिखित नियमसे रात्रिकी १८ बार णमोकारकी जाप इत्यादि।

कर्मोंके नाश करनेके कारण हैं) श्वासोश्वाससे, नेत्रोंकी टंकारसे, खांसनेसे, छींकनेसे, जंभाई लेनेसे, सूक्ष्म अंगोंके हिलानेसे, आगों-पांगके फेंकनेसे, दृष्टिदोषसे इत्यादि समस्त क्रियाओंसे सूत्रपाठ आदि क्रियाओंका विस्मरण किया हो, अविनय की हो, प्रमाद और अज्ञानसे अन्यथा प्ररूपणा की हो तो मैं इस प्रतिक्रमणके समय वीर भगवानकी भक्तिरूप कायोत्सर्ग धारण करता हूं। और तब-तक पापकर्मोंको सर्वथा छोड़कर शरीरसे भी ममत्व त्याग करता हूं।

वीर प्रभुका स्तवन।

यः सर्वाणि चराचराणि विधिवद्द्रव्याणि तेषां गुणान्। पर्यायानपि भूतभावि भवतः सर्वान् सदा सर्वथा॥ जानीते युगपत्प्रतिक्षणमतः सर्वज्ञ इत्युच्यते। सर्वज्ञाय जिनेश्वराय महते वीराय तस्मै नमः॥ १॥

अर्थ—जो समस्त चराचर पदार्थोंको तथा समस्त द्रव्य और उनकी कालत्रयवर्ती समस्त पर्यायोंको एक साथ प्रतिक्षण सदैव जानता है उसको सर्वज्ञ कहते है। वीर भगवान सर्वज्ञ हैं, वीत-राग हैं और महान पूज्य जिनेश्वर है इस लिये वीर प्रभुको नमस्कार है।

वीरः सर्वसुरासुरेन्द्रमहितो वीरं बुधाः संश्रिताः।
वीरेणाभिहितः स्वकर्मनिचयो वीराय भक्त्या नमः॥
वीरात्तीर्थमिदं प्रवृत्तमतुलं वीरस्य घोरं तपो।
वीरे श्रीधृतिकीर्तिकांतिनिचयो हेवीर भद्रं त्वयि॥ २

अर्थ-हे वीर प्रभो ! आपकी समस्त इन्द्र पूजा करते हैं। विज्ञ गणधरादिक आपकी सेवा करते हैं। और आपने समस्त कर्मोंको नष्ट कर दिया है इस लिये हे वीर ! आपको नमस्कार है। धर्म तीर्थ आपसे इस कालिकालमें चल रहा है, आप घोर तपको धारण करनेवाले परमयोगी हो। आपमें श्री, कांति, कीर्ति आदि सर्व गुणोंका वास है अतएव आप कल्याणभागी हों।

ये वीरपादौ प्रणमंति नित्यं, ध्याने स्थिताः संयमयोगयुक्ताः। ते वीतशोका हि भवंति लोके, संसारदुर्गं विषमं तरंति॥ ३॥

अर्थ—जो मनुष्य संयमको धारण कर और ध्यानमें लीन होकर वीरप्रभुको नमस्कार करता है वह समस्त शोकको दूरकर संसार समुद्रके पार होजाता है।

वीर प्रभुका चारित्र ।

चारित्रं सर्व जिनैश्चरित्रं प्रोक्तं च सर्वशिष्येभ्यः। प्रणमामि ×पंचभेदं *पंचमचारित्रलाभाय ॥ १ ॥

अर्थ—सदाचार जिनेन्द्र भगवान्ने स्वयं पालन किया है और समस्त जीवोंके उपकारके लिये सबको बतलाया है। उत्तम चारित्रकी प्राप्तिके लिये नमस्कार करता हूं।

व्रतसमुदयमूलः संयमास्कंधबंधो, यमनियम-

× सामायिक १ छेदोपस्थापना २ परिहारविशुद्धि, ३ सूक्ष्मसांपराय ४ और यथाख्यात ५। * साक्षात्मोक्षका कारण यथाख्यात चारित्र है।

पयोभिर्वर्द्धितः शीलशाखः । समितिकलितभारो गुप्तिगुप्तप्रवालो, गुणकुसुमसुगंधिः सत्तपाश्चित्र पत्र ॥ शिवसुखफलदायी यो दयाछाययोढयः, शुभजनपथिकानां खेदनोदे समर्थः । दुरितरविजतापं प्रापयन्नंतभावं, स भवविभवहान्यैर्नोस्तु चारित्रवृक्षः॥२॥

अर्थ—व्रत, संयम, नियम, यम, शील, समिति, गुप्ति, तप, महाव्रत, और दश धर्म चारित्रका रूप है। चारित्र मोक्षको देनेवाला दयाका बीज है, समस्त पाप और संसारका नाश करनेवाला है।

धर्म महिमा।

धम्मो मंगलमुक्किट्ठं अहिंसा संजमो तवो ।
देवा वि तस्स पणमंति जस्स धम्मे सयामणो ॥१॥

अर्थ—धर्म समस्त मंगलोंमेंसे प्रधान मंगल है, अहिंसा, संयम और तप ये धर्मके रूप हैं। जो मनुष्य धर्मको पवित्र हृदयसे धारण करता है उसको देवता भी नमस्कार करते हैं।

धर्मः सर्वसुखाकरो हितकरो धर्मं बुधाश्चिन्वते ।
धर्मेणैव समाप्यते शिवसुखं धर्माय तस्मै नमः ॥
धर्मान्नास्त्यपरः सुहृद्भवभृतां धर्मस्य मूलं दया ।
धर्मे चित्तमहं दधे प्रतिदिनं हे धर्म! मां पालय ॥२॥

अर्थ—धर्मका मूल दया है, धर्मको विद्वान् गणधरादिक मुनीश्वर धारण करते है, धर्मसे सर्व सुखोंकी प्राप्ति और कल्याण होता है। धर्म सेवन करनेसे मोक्षकी प्राप्ति होती है। धर्म ही

जगतका बंधु है इस लिये धर्म सेवन करनेमें अपना चित्त लगाता हूं। हे धर्म ! मेरी रक्षा कर ! तेरे लिये नमस्कार है।

इच्छामि भंते पडिक्कमणा इच्चारमालोचेउ तत्थ देसासिआ, असणासिआ आथाणासिआ कालासिआ मुद्दासिआ काउस्सग्गासिआ पणमासिआ आवत्तासिआ पडिक्कमणाए तत्थसु आवासएसु परिहीणदा जो मए अच्चासणा मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छामि दुक्कडं। दंसण वय सामाइय पोसह सचित्तरायभत्तेय । बंभारंभपरिग्गह अणुमणमुद्दिठ्ठ देसविरदेदे। एयासु यथा कहिद पडिमासु पमादाकथा इचार सोहणट्ठं छेदोवट्ठवेणं अरहंत सिद्ध आयरीय उवज्झाय सव्वसाहु सक्खियं सम्मत्तपुव्वगं दिढव्वदं समारोहियं मे भवदु ३ अथ देवसियपडिक्कमणाए सव्वाइचारविसोहिणिमित्तं पुव्वापरिय कम्मेण चउवीसातित्थयरभत्ति काउस्सग्गं करेमि॥

अर्थ—हे भगवन् ! अंतमें मैं अब प्रतिक्रमणमें लगे हुए दोषोंकी आलोचना करता हूं। द्रव्य—क्षेत्र—काल और भावोंकी अनुकूल योग्यता नहीं मिलनेसे, देश, आसन, स्थान, काल, मुद्रा, कायोत्सर्ग, श्वासोश्वास, नमस्कारादि विधि, और स्तुति आदि क्रियामें शीघ्रताके लिये, छह आवश्यक कर्मोंके करनेमें कुछ भी हीनता प्राप्त हुई हो, अथवा प्रमाद और अज्ञानसे जिन दोषोंकी

(अथवा मन, वचन, काय और कृत कारित अनुमोदना द्वारा) प्राप्ति हुई हो तो वे सब मिथ्या हों।

इस प्रकार दोषोंकी शांतिके लिये चौवोस तीर्थंकर भक्ति व कायोत्सर्ग धारण करे। णमोकार मंत्र ९ वार पढकर जाप देवे।

"णमो अरहंताणं"से प्रारंभकर "यावंति जिनचैत्यानि" इस श्लोक पर्यन्त पाठ पढ़ना चाहिये और कायोत्सर्ग धारण करना चाहिये।

चउवीसं तित्थयरे उसहाई वीर पच्छिमे वंदे।
सव्वेसिं गुणगणहरसिद्धे सिरसा णमंसामि ॥ १ ॥

अर्थ—प्रथम ऋषभदेवको आदि-लेकर वीरप्रभु पर्यन्त चौवीस तीर्थंकर, गणधर, और सिद्ध परमेष्टीको नमस्कार करता हूं।

ये लोकेऽष्टसहस्त्रलक्षणधरा ज्ञेयार्णवांतर्गताः।
ये संपन्नवजालहेतुमथनाश्चंद्रार्कतेजोधिकाः।
ये साध्विन्द्रसुराप्सरोगणशतैर्गीतप्रणुत्यार्चितान्
तान् देवान् ऋषभादिवीरचरमान् भक्त्या नमस्याम्यहं ॥

अर्थ—समस्त ज्ञेय पदार्थोंके ज्ञाता, एक हजार आठ शुभ लक्षणोंसे विराजमान, संसारके बंधनको नाश करनेवाले, करोडों सूर्य और चंद्रमासे भी अधिक तेजस्वी, मुनीश्वर नरेन्द्र और देवेन्द्रसे पूज्य-ऐसे ऋषभादि चौवीस तीर्थंकरोंको नमस्कार करता हूं।

नाभेयं देवपूज्यं जिनवरमजितं सर्वलोकप्रदीपं।
सर्वज्ञं संभवाख्यं मुनिगणवृषभं नंदनं देवदेवं ॥
कर्मारिघ्नं सुबुद्धिं वरकमलनिभ पद्मपुष्पाभिगंधं।

क्षांतं दांतं सुपार्श्वं सकलशशिनिभं चंद्रनामानमीडे॥
विख्यातं पुष्पदंतं भवभयमथनं शीतलं लोकनाथं।
श्रेयांसं शीलकोशं प्रवरनरगुरू वासुपूज्यं सुपूज्यं।
मुक्तं दान्तेन्द्रियांश्च विमलमृषिपतिं सिंहसैन्यं
मुनीन्द्रं।
धर्मं सद्धर्मकेतुं शमदमनिलय स्तौमि शांति शरण्यं॥
कुंथुं सिद्धालयस्थं श्रमणपतिमर त्यक्तभोगेषु चक्रं।
मल्लिं विख्यातगोत्रं खचरगुणनुतं सुव्रतं सौख्यराशिं
देवेन्द्रार्च्यं नमीशं हरिकुलतिलकं नेमिचंद्र भवान्तं।
पार्श्वं नागेन्द्रवंद्यं शरणमहमितो वर्द्धमानं च भक्त्या×

इच्छामि भंते चउवीस तित्थयर भत्ति काउस्सग्गो कउतस्सालोचेउ पंच महाकल्लाणसंपण्णाणं अट्ठ महापाडिहेर सहियाणं चउतीस अतिशय विशेष संजुत्ताणं वत्तीस देवेंद माणि मउड मत्थय महियाण वलदेव वासुदेव चक्कहर रिसि मुणि जय अणागारोव गूढाणं थुइसय सहस्स णिलयाणं उसहाइ वीर पच्छिम मंगल महापुरिसाण भत्तिए णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि वंदामि णमंसामि

× १ इन तीनो श्लोकोंका अर्थ बहुत ही सरल है। ऋषभ १ अजित २ सभव ३ अभिनन्दन ४ सुमति ५ पद्मप्रभ ६ सुपार्श्व ७ चद्रप्रभ ८ पुष्पदन्त ९ शीतलनाथ १० श्रेयासनाथ ११ वासुपूज्य १२ विमलनाथ १३ अनन्तनाथ १४ धर्मनाथ १५ शातिनाथ १६ कुथनाथ १७ अरहनाथ १८ मल्लिनाथ १९ मुनिसुव्रत २० नमिनाथ २१ नेमिनाथ २२ पार्श्वनाथ २३ महावीर २४ इस प्रकार चौवीस तीर्थंकर है।

दुक्खक्खउ कम्मक्खउ बोहिलाउ सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं। दंसण वय सामाइय पोसह सचित्तरायभत्तीय। बंभारंभ परिग्गह अणुमणमुद्दिठ देसविरदेदे। एयासु यथा कहिद पडिमासु पमादाकया। इचार सोहणट्ठं छेदोवट्ठावणं अरहंत सिद्ध आयरीय उवज्झाय सव्वसाहु सक्खियं सम्मत्त पुव्वगं दिढव्वदं समारोहियं मे भवदु मे भवदु मे भवदु। अथ देवसिय पडिक्कमणाए सव्वाइचारविसोहिणिमित्तं पुव्वायरीय कमेण आलोयण सिद्धभत्ति पडिक्कमणभत्ति णिट्ठिदकरण वीरभत्ति चउवीस तित्थयरभत्ति कृत्वा तद्धीनाधिकत्वादिदोष परिहारार्थं सकलदोषनिराकरणार्थं सर्वमलातिचारविशुद्ध्यर्थं आत्मपवित्रीकरणार्थं समाधिभक्ति कायोत्सर्गं करोमि ॥

(णमोकार मंत्र ९ वार २७ श्वासोश्वासमें जाप्य)

अर्थ—हे भगवन्! मैं समस्त दोषोंको दूर करनेके लिये चौवीस तीर्थंकरोंकी भक्ति रूप कायोत्सर्ग धारण करता हुआ अपने कृत: कर्मोंकी आलोचना करता हूं।

महान् पंच कल्याणकोंसे सुशोभित, अष्ट महा प्रातिहार्य[1] सहित, चौतीस[2] अतिशय सहित, बत्तीस प्रकारके देवेन्द्रोंके मस्त-

---

१ अशोक वृक्ष, पुष्पवृष्टि, दिव्यध्वनि, चामर, भामंडल, छत्रत्रय, सिंहासन और दुन्दुभि बाजोंका बजना ये आठ प्रातिहार्य हैं। २ दश जनम, दश केवलज्ञान और चौदह देवकृत इस प्रकार चौतीस अतिशय अरहंत भगवानके होते हैं।

कमें लगी हुई मणियोंसे पूज्य, बलभद्र-वासुदेव-चक्रवर्ती-रुद्र-ऋषि-मुनीश्वर-यती-अणगार आदि महान् पुरुषोंके शिरोवंद्य, देवेंद्रोंकर सतत वंदनीय ऋषभदेवसे प्रारंभकर वीर भगवान पर्यंत चौवीस तीर्थंकर महामंगलके करनेवाले हैं, पुण्य पुरुष हैं, उनकी मैं त्रिकाल वंदना करता हूं, स्तवन करता हूं, पूजा करता हूं, नमस्कार करता हूं, चौवीस भगवानकी भक्तिसे दुःखोंका नाश हो, कर्मोंका नाश हो, रत्नत्रयकी प्राप्ति हो, शुभ गति हो, समाधिमरण हो और श्री जिनेन्द्र देवके गुणोंकी प्राप्ति हो। दर्शनादि प्रतिमामें सर्व दोषोंकी विशुद्धिके लिये पूर्व आचार्योंकी परिपाटीके अनुकूल अपने समस्त कृत कर्मोंकी आलोचना पूर्वक श्री सिद्ध प्रतिक्रमणभक्ति-वीरभक्ति और चौवीस तीर्थंकर भक्ति करनेपर विशेष दोषोंकी शुद्धिके लिये समाधि भक्ति कायोत्सर्ग धारण करता हूं। अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और सर्वसाधुकी साक्षी पूर्वक सम्यग्दर्शन सहित उत्तमोत्तम व्रतोंका समारोह मेरे हृदयमंदिरमें हो।

(९ वार णमोकार मंत्र २७ श्वासमें)

शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः संगतिः सर्वदार्यैः।
सद्वृत्तानां गुणगणकथा दोषवादे च मौनम्॥
सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्वे।
संपद्यंतां मम भव भवे यावदेतेऽपवर्गः॥ १॥

अर्थ-जैनागम अथवा जिन सिद्धान्तका अभ्यास, श्री जिनेन्द्रदेव भगवान्‌की भक्तिपूर्वक वंदना, सदाचार धारी जैन यति,

ब्रह्मचारी-ऐलक और विद्वान् महात्माओंका संग, श्री जिनेन्द्र देव प्रभृति पुण्य पुरुषोंकी कथाका श्रवण, दूसरोंकी निंदाका त्याग, दूसरोंके तिरस्कारमें मौन, समस्त जीव मात्रमें प्रेम, हित मित वचन और आत्मभावना इतनी वस्तुओंका समागम जब तक मोक्षकी प्राप्ति न हो तब तक नित्य भव भवमें रहो।

तव पादौ मम हृदये मम हृदयं तव पदद्वये लीनं।
तिष्ठतु जिनेन्द्र! तावद्यावन्निर्वाणसंप्राप्तिः॥

अर्थ-हे जिनेन्द्रदेव! आपके पवित्र चरणकमल जब तक मुझे मोक्षकी प्राप्ति न हो तब तक मेरे हृदय मंदिरमें विराजमान रहो और मेरा हृदय आपके चरणकमलोंमें लीन रहे।

अक्खरपयत्थ हीणं मत्ताहीणं च जं मए भणियं।
तं खमउ णाणदेव य मज्झवि दुक्खक्खयं दिंतु॥

अर्थ-हे जिनशासन (जिनागम) देव! मैंने अक्षर मात्र रहित जो कुछ अशुद्ध उच्चारण किया हो, सो क्षमा करो और मेरे दुःखोंका नाश करो।

दुक्खक्खउ कम्मक्खउ बोहिलाहो सुगइगमणं।
सम्मं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउमज्झं॥

अर्थ-हे भगवन्! मेरे दुःखोंका नाश हो, कर्मोंका नाश हो, रत्नत्रयकी प्राप्ति हो, सुगतिगमन हो, सम्यग्दर्शनकी प्राप्ति हो, समाधिमरण हो और श्री जिनराजके गुणोंकी प्राप्ति हो ऐसी मेरी भावना है।

इच्छामि भंते इरियावहियस्स आलोचेउं पुव्वुत्तर दक्षिण पच्छिम चउदिसु विदिसासु विहरमाणेण जुगुंतर दिट्ठिणा दट्ठवा उवउवघारियाए पमादद्दोसेण पाणभूद जीवसत्ताणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छामि दुक्कडं ॥ (९ वार णमोकार मंत्रकी जाप, और आवर्त्त चारों दिशामें एवं प्रणुत्ति) ॥

॥ इति शम् ॥



अथ मिच्छामि दुक्कडम्.



प्रणमु श्री अरिहंतने, भजुं सरस्वति भावे;
जीव अनंता में बहु हण्या, केहेतां पार न आवे ।
ते मुज मिच्छामि दुक्कडम्, अरिहंतनी साख ॥१॥
के मे जीव विराधीआ, चोर्याशी लाख ।
सार संभाळ नहिं करी, कीधा छे बहु घात, ते मुज० ॥२॥
ईतर नित्य निगोदना, सात सातज लाख ।
सात लाख पृथ्वी तणा, सात अपज काय; ते मुज० ॥३॥
दश लाख वनस्पति, प्रत्यक्ष साधारण ।
सात लाख तेज कायना, सात वायुज जाण, ते मुज० ॥४॥
बे ती चौ ईन्द्रि जीवना, बबे लाख विख्यात,
देव, पशु वळी नर्कना, चार चार उत्पात; ते मुज० ॥५॥
चौद लाख मनुष गतिए, लक्ष चोर्याशी गणीया,
कृत कारित अनुमोदना, मन वच कायथी हणीया; ते मुज० ॥६॥
एणी पेरे परभवे में कर्या, कर्या पाप अनंत,
त्रिविध त्रिविध करी हुं भम्यो, दुरगति दातार; ते मुज० ॥७॥
हिंसा करी में जीवनी, बोल्यो जुठा बोल ।
दोष अदत्ता दानथुं, मैथुन हणमाद; ते मुज० ॥८॥
परिग्रह मेळव्यो कारमो, कीधो क्रोध विशेष ।
मान माया लोभ में कर्या, वळी राग ने द्वेष; ते मुज० ॥९॥

चाडी करी में चोतरे, वेर झेर वधार्यां ।
कुगुरु, देव कुधर्मने, करी प्रतीतने पाळ्या; ते मुज०॥१०॥
क्रोध करी जीव दुखव्या, कीधां कुडां कलंक ।
निंदा करी में पारकी, रात दिवस दसंत; ते मुज०॥११॥
खाटकीना भव में कर्या, जीवना वध कीध ।
वाघरीने भव चरकली, मारी कंई अगणीत; ते मुज०॥१२॥
माछीने भवे माछलां, झाली जळ थकी काढ्यां ।
प्रपंच करी भवे पारधी, मृग मारीन पाड्यां; ते मुज० ॥१३॥
काजी मुल्लांने भवे, पढी मंत्र कठोर ।
जीव अनंता जे में कर्या, पाप लाग्यां अघोर, ते मुज०॥१४॥
कोटवालनो भव में कर्यो, कर्या आकरा दंड ।
बंधीवान मरावीआ, पाड्या कोरडा अंग; ते मुज०॥१५॥
कुंभारनो भव में कर्यो, मार्या भट्टीने तापे ।
तेली भवे तल पीलीया, पेट भरीयुं में पापे; ते मुज० ॥१६॥
परमाधामीने भवे, दीधां नारकी दुःख ।
छेदन भेदन वेदना, लेश दीधुं न सुख; ते मुज० ॥१७॥
खेडु भवे हळ खेडीयां, फोड्यां पृथ्विनां पेट ।
आदु सुरण घणां कर्यां, खाधां खूब चपेट, ते मुज० ॥१८॥
मालीने भवे रोपीयां, नानाविधि वृक्ष ।
मूळ पात्र फल फूलना, पाप लाग्यां ए लक्ष; ते मुज०॥१९॥
वणझारानो भव में कर्यो, भर्यो अधिक भार ।
पोठी पुठे कीडा पड्या, नहि दया लगार, ते मुज०॥२०॥

छींपाने भवे छेतर्यां, कीधा रंगना पास ।
अग्नि जळ कीधां घणां,जीव पकव्या छे खास;ते मुज०॥२१॥
सुरपणे रण झुजतां, मार्यां माणस वृंद, ।
मदिरा मांस मधु भख्यां,खाधां मूळ ने कंद;ते मुज०॥२२॥
खाण खोदावी में अति घणी, तेनां पाणी उलेच्यां, ।
आरंभ कीधा अति घणा,नहीं पापज पेख्यां; ते मुज०॥२३॥
अघोर कर्म कर्यां वळी, वनमां दव दीधो, ।
जीव अनंताने भरथीने, नहिं कर्मथी बीधो; ते मुज० ॥२४॥
भाडभुंजानो भव में कर्यो, मार्या भट्ठीमां जीव,।
जुवार चणा बहु सेकीया, पडता अति ब्रुंद; ते मुज० ॥२५॥
बिल्ली भवे ऊंदर हण्या, गरोळीए अंतारी, ।
मनुष्य भवे मूढता थकी, में जु लीख मारी; ते मुज०॥२६॥
सुवावड दूषण घणा, आणी गर्भ गळाव्या, ।
जवि अणी विध्या घणा, भांग्या शयिळ व्रत; ते मुज०॥२७॥
लुहारनो भव में कर्यो, घडयां शस्त्र अनेक, ।
कोस कुहाडा ने पावडा, मार्या मुकी विवेक; ते मुज० ॥२८॥
सुतारनो भव में कर्यो, लीला व्रक्ष वढाव्यां,।
आवळ बावळ बोरडी, झाझां मूळ कपाव्यां; ते मुज०॥२९॥
हाथीना भव में कर्या, जीव पुंछे पछाडया, ।
पंखी माळा तोडीया, सुंढे कंईकने झाडया; ते मुज० ॥३०॥
कडीआना भव में कर्या, कुवा वाव खोदाव्या, ।
टांका में बंधावीआ. जीव अनंत कपाव्या; ते मुज० ॥३१॥

धोबीना भव में कर्या, जळना जीव मार्या, ।
धूळवते कंईक ढांकीया, दान देता वार्या; ते मुज० ॥३२॥
गुज्जरना भव में कर्या, लीला भारा वढाव्या, ।
पाडा बल ने ऊंटना, नाक छेदी वींधाव्या; ते मुज० ॥३३॥
वणिकना भव में कर्या, कुडां पापज कीधां, ।
ओछुं आपी अदकुं लीधुं, तेना दोपज लीधा; ते मुज० ॥३४॥
विकथा चोरी करी वळी, सेव्या पंच प्रमाद,
इष्ट वियोग पडावीया, रुदन विखवाद; ते मुज० ॥३५॥
रांधण पीसण गारण, एवा आरंभ अनेक, ।
रांधण बालण इंधणा, पाप लाग्या विशेषः ते मुज०॥३६॥
साधुने श्रावक तणा, व्रत लईने भांग्या,।
मूळ अने उत्तरतणां, मुझ दोपज लाग्या; ते मुज० ॥३७॥
वींछु सिंह ने चीतरा, गीध स्याळ ने समडी, ।
ए हिंसक तणे भवे, हिंसा कीधी मे अदकी; ते मुज०॥३८॥
एणी पेरे परभवे मे कर्या, बांध्यो कर्म अनंत, ।
त्रिविध त्रिविध करी ओचरुं, करुं जनम पवित्र; ते मुज०॥३९॥
राग वेसाडी जे भणे, गाय ढाळ सहित, ।
'नरेंद्रकीर्ति' कहे तेहनां, छुटे पाप त्वरित; ते मुज० ॥४०॥

इति मिच्छामि दुक्कडं संपूर्ण।